॥ ओ३म् ।

मोक्ष मार्ग प्रदीपिका

लेखक

रा० किशनदयाल सिंह

प्राप्तीस्थान

पुस्तक भण्डार जयपुर

मुल्य एक रुपया

मुद्रक—

श्रीबालचन्द्र ई० प्रेस, जयपुर.

॥ ओ३म् ॥

ईशा वास्यमिद ँ सर्वं यत्किञ्च जगत्याँ जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्य स्विद्धनम् ॥

यजु० अ० ४० मंत्र १

भावार्थ

इस नाश वाले संसार में जो कुछ वस्तुएं हैं इन सब में ईश्वर विद्यमान हैं। उस ईश्वर की दी हुई वस्तुओं का भोग करो, किसी का धन लेने की अधर्म से इच्छा मत करो।

॥ नज़्म में ॥

यजुर्वेद कहता है तुम से यह ज्ञान,
पढो उसको दिल से धरो उस पै ध्यान ॥
जो कुछ इस धरा पर धरा देखते हो,
वो चल है सभी कुछ क्या सोचते हो ॥

ढंका है यह ईश्वर से सारा जगत,
नहीं न्यारा ब्रह्मांड से है जगत ॥
मिले सब पदारथ हैं भगवान ही से,
भोगो इन्हें तुम गुरू ज्ञान ही से ॥
न लालच कभी इनका करना ज़रा तुम,
न धन दूसरों कीहि इच्छा करो तुम ॥
विचारो यह धन किसका है इस जहाँपर,
किया किसने पैदा है इसको यहाँपर ॥
किसी का नहीं सिर्फ़ ईश्वर का नाता,
यही सिंह के० डी० है सबको बताता ॥

—o:*:o—

॥ ॐ ॥

सादर श्रीगुरुमहाराज के चरणकमलों में भेंट

एक समय जब कि मेरे आत्मिक शक्ति को बढ़ाने वाले गुरुदेव श्री १०८ श्री पूज्यपाद श्री स्वामी योगानन्द जी महाराज ने इस स्थान फुलेरा रियासत जयपुर राजपूताना में अपने शुभागमन से मेरे तुच्छ गृह को अपने चरण कमलों से पवित्र किया। उस समय एक दिन सत्संग के पश्चात् सायंकाल को उपस्थित सत्संगियों ने भजन और आरती पढ़ी, मैं एक तुच्छ जीव कुछ योग न दे सका। उसी काल से इच्छा हुई कि कुछ भजन प्रार्थना आदि श्रीमहाराज के चरण कमलों में अर्पण करूँ। परन्तु किस प्रकार की जाय कारण यह कि मैं कवि 'शायर' नहीं हूँ। और न कभी अपने जीवन में ऐसे महान पुरुषों का सत्संग ही हुवा। जिस से कि श्री महाराज के चरण कमलों में भेट लेकर उपस्थित होता। किन्तु आपकी कृपा दृष्टि ने मेरे ऊपर वह प्रभाव डाला कि जो भाव मेरे हृदय

में उत्पन्न हुआ यह भेट उन्हीं की प्रेम कृपा का फल है कि यह टूटी फूटी शायरी या काव्य लिखकर करबद्ध लेकर श्रीमहाराज के चरण कमलों में अर्पण कर रहा हूँ। आशा है कि श्री महाराज इस तुच्छ दास की विनय को स्वीकार करेंगे कारण यह कि इस में अनेक प्रकार के काव्य की दृष्टि से दोष हों तो भी उमड़े हुये प्रेम ने अपने मनोविकारों को प्रगट कर ही दिया है। आशा है कि पाठक लोग भी मेरी त्रुटियों को क्षमा करके आत्मज्ञान के ऊपर ही दृष्टि देंगे ॥

——:०*०:——

दासानुदास:—

किशनदयालसिंह

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥
॥यजु० अ० ४० मंत्र २॥

॥ भावार्थ ॥

मनुष्य संसार में धर्म युक्त निष्काम कर्मों को करता हुआ ही सो वर्ष जीने की इच्छा करे इस प्रकार धर्म युक्त काम करने से कोई कर्म बन्धन का कारण नहीं होगा। इसके सिवाय कर्म बन्धन से बचने का कोई और उपाय नहीं है।

॥नज़्म में॥

जो नर करता हुआ कर्त्तव्य करमों को,
करे सौ वर्ष गर जीने की इच्छा को ।
करम निष्काम होवें हर तरह से,
कभी भी कर्म फिर लिपटें न उससे ।
सिवा इसके नहीं तरकीब इस जग में,
छुटावे बन्ध के. डी. सिंह जो जग में ।

——:०*०:——

॥ ॐ ॥

❋ भूमिका ❋

परब्रह्म परमेश्वर–सर्वव्यापक–सर्वशक्तिमान–अ-खंड जिसने सारे जगत को अपने गर्भ में धारण कर रक्खा है। उसके चरण कमलों में इस अल्पज्ञ का वारम्वार नमस्कार है। जिसकी लेश मात्र कृपा से ही इस एक छोटी सी पुस्तक के रचने का साहस किया है। इस पुस्तक में गुरू महिमा–तथा ईश्वर की अनेकानेक भक्ति पूर्ण स्तुति, प्रार्थना और उपासना इत्यादि के उत्तम उत्तम भजन दर्शाये गये है जिसमें श्रीमद्भग्वतगीता के आशय पर ही विशेषतया रचना की गई है जो ईश्वर के प्रेम भक्ति और वैराग्य की ओर ले जाने वाली हैं कारण यह है कि जब प्रेम होता है जभी भक्ति होती है और भक्ति से ज्ञान उत्पन्न होता है और ज्ञान से मोक्ष प्राप्त होता है। जैसा कि वेदों ने और ऋषि महर्षियों ने भी वतलाया है। यथा (ऋते-ज्ञानान्मुक्ती) अर्थात् विना ज्ञान के मुक्ति नहीं होती मोक्ष के पश्चात् उसी सर्वानन्द आनन्द स्वरूप परमात्मा में लय होकर जीव आनन्द का अखन्ड भोग करता है। अतः मैं

आशा करता हूँ कि मोक्ष के चाहने वाले इस पुस्तक से कुछ लाभ उठाकर आनन्द प्राप्त करेंगे। यद्यपि मोक्ष का विषय अत्यन्त ही कठिन है तो भी ऐसी पुस्तकों के पढ़ने से और विचार करने से मनुष्य थोड़ा बहुत मोक्ष के मार्ग में आगे को पैर रखता ही है इस विचार से इस पुस्तक में अपने मनोभावों को दर्शाया गया है कि यदि पाठक इससे कुछ लाभ उठा सकें तो अपने परिश्रम को सफल समझूँगा।

आप महानुभावों का एक तुच्छ सेवकः—

के० डी० सिंह

असुर्य्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः ।
ताँस्ते प्रेत्याभि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥'

॥ यजु० 'अ० ४० मंत्र ३ ॥

॥ भावार्थ ॥

वे मनुष्य मरने के पश्चात महा अन्धकार लोकों में जाते हैं जो अपनी आत्मा को मार डालते हैं। यानी जो मनुष्य आत्मा व मन में और जानते हैं। वाणी से कुछ और बोलते, करते कुछ और हैं। ऐसे लोग मरने के पीछे और जीते हुवे भी दुःख और अज्ञान रूप अन्धकार से युक्त होकर भोगों को प्राप्त होते हैं और जो लोग आत्मा के अनुकूल मन वाणी और कर्म से निष्कपट एक सा आचरण करते हैं। वोही सौभाग्यवान सब जगत को पवित्र करते हुवे इस लोक और परलोक में अटल सुख पाते हैं।

॥ नज़्म में ॥

हथा आत्मा जो हनन कर रहे हैं ।
पापान्ध कारों में वे जन पड़े हैं ॥

समझकर के कुछ और मन आत्मा से ।

खिलाफ़ उसके करते या कहते ज़ुबां से ।

वह जीते मरें दुःख पाते रहेंगे ।

अन्धकारों के भोगो को भोगा करेंगे ॥

वही तामसी गत में पड़ जावेंगे ।

फिर असुरों की श्रेणी में आजावेंगे ॥

समझ अपनी पै फिर वह पछतायेंगें ।

और फल कृत्य कर्म्मों का पाजायगे ॥

चले हैं मुताबिक़ जो मन आत्माके ।

करम निष्कपट ऐसे होवें ज़ुबांके ॥

रहन और सहन जिनका ऐसा बना है ।

अटल सुखका उनको सदा सामना है ॥

स्तुति श्री चित्रगुप्तजी महाराज

करूँ मैं नमस्कार हे चित्रगुप्तजी,
मैं परणाम करजोड़ करता श्रीजी
श्रीजी के कुल में मैं पैदा हुवा हूँ,
तुम्हारी ही गोदों में खेला हुआ हूँ ॥
तुम्हीं ने कलम की है सेवा बतादी,
तुम्हीं ने तो मुझको यह विद्या सिखादी ।
इसी क़लम के ज़ोर से मैं बढ़ा हूँ,
इसी की तो ताक़त से ज़िन्दा रहा हूँ ॥
इसी ने करम मुझ पै हरदम किया है,
इसी पर भरोसा तो मैंने किया है ।
इसी की बदौलत मैं सर सब्ज़ था,
इसी का मुझे बहुत ही फ़ख्र था ॥
इसी से बहुत देश सेवा करी है,
इसी की तो हरदम सुमरना करी है ।
किलर्की से इसने बढ़ाया मुझे था,
बिठाया डिवीज़न के सर पर मुझे था ॥

मेरे नेक कामों के अन्जाम में,

पैन्शन मिली पांच कम साठ में।

मेरा उम्र साथी विदा हो चुका है,

समय वर्ष बारह का अब हो गया है॥

वैराग्य भी मुझको होता रहा है,

तुम्हारे ही दरशन का मक़सद रहा है।

यकायक मुझे होश आही गया था,

उसी वक्त गुरूदेव शरणा लिया था॥

यह दिन अब गुज़रते हैं अच्छी तरह से,

सुमरता हूँ भगवन को मैं इस तरह से।

सोहँग जाप जपता हुआ रात दिन मैं,

तुम्हारे बुलाने की आशा है मन में॥

समय जो कि थोड़ा बहुत रह गया अब,

मुझे ज्ञान इस में ही दे दो ज़रा अब।

जो मैं सुर्खरूः बन के आने तुम्हारे,

निडर हो के चरणों में आऊं तुम्हारे॥

न ख्वाहिश है फल नेक बद की मुझें अब,

न दुःख सुख की परवाह बाक़ी मुझे अब।

न डर अब रहा मुझको जीवन मरण का,
नहीं हानि है लाभ जीवन मरण का ॥
मगर मै तो चाहत हूँ किरपा तुम्हारी,
सहारे ज़रा से में मुक्ति हमारी ।
निराशी न करना प्रभो के. डि. सिंह को,
तुम्हारे ही सुमरन में भूला हूँ सब को ॥

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन पूर्वमर्षत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥

य. अ. ४० । मं. ४

॥ भावार्थ ॥

हे विद्वान् मनुष्यो जो अद्वितीय अचल मन के वेग से भी अति वेगवान है और सब से पहले चलनें वाला अर्थात् जहां कोई न पहुंचे वहां सर्वव्यापी होनें के कारण पहले ही से मौजूद है । ऐसा जो ईश्वर है वही ब्रह्म है ।

यह चक्षु आदि इन्द्रियों से प्राप्त नहीं होता, वह स्वयं निश्चल हुआ, सब जीवों को नियम से चलाता और धारण करता है। उसके अति सूक्ष्म और इन्द्रिय गम्य न होने के कारण धर्मात्मा विद्वान् योगी को ही उसका साक्षात् ज्ञान होता है दूसरों को नहीं।

॥ नज़्म ॥

नहीं चलता हुआ भी ब्रह्म, मन से तेज़ चलता है।
नहीं हैं इन्द्रियाँ उस के, परन्तु वह विचरता है॥
वह व्यापक है इसीकारण, भली विधि सब जगह हाज़िर।
अचल है वह मगर फिर भी, सभी को पार करता है॥
पदारथ सब चलित जो हैं, उल्लंघन उनको करता है।
उसी में सूत्रात्मा वायु, कर्म धारण भि करता है॥
वही है वायु के अन्दर, वह जल धारण भी करता है।
वही तो मेघ बन कर के, तृपत संसार करता है॥

—०:*:०—

मेरा परिचय

पूर्व इसके कि यह पुस्तक " गुरुमहिमा " और " मोक्ष-मार्गप्रदीपिका " सर्व साधारण के सम्मुख उपस्थित की जावे यह आवश्यक समझा गया है कि पुस्तक रचयिता अपना भी सूक्ष्म-तया परिचय करादे । सब से प्रथम तो यह विदित हो कि मैं कोई विद्वान् नहीं, कवि नहीं केवल एक साधारण योग्यता का व्यक्ति हूँ । थोड़े ही समय में विद्वानों के सत्संग और गुरु महाराज की कृपा से यह अपने मन के भाव इस पुस्तक में प्रकट किये हैं ।

मैं जाति से चित्रगुप्त वंशी वर्मा गोत्र कुल कायस्थ भटनागर अल्ल डसनियाँ राय जादा हूँ । पूर्व पुरुष बादशाहत हिन्दुस्तान (अहले इस्लाम) के ज़माने में आला दर्जे पर (उच्च अधिकार पर) सुशोभित थे । अर्थात् राजा पचपाल बहादुर को राजा बहादुर का ख़िताब मय मुनसबेआला के मिला था । उनके सुपुत्र राय शिवराज बहादुर हुये, जिन को ख़िताब राय का पुश्तैनी मिला था और वहप्रान्त डासना (अब ज़िला मेरठ)

के गवर्नर (सूबे दार) थे उन्हीं की ६ या ७ पीढ़ी में मेरे पूर्वज श्रीमान् थानसिंह जी दीवान रियासत रामपुर हुये । उनकी संतान में मेरे प्रपितामह बुद्ध सिंहजी व पितामह मोहनलालजी जयपुर राजपूताना निवासी थे । इनके तीन सुपुत्र थे, वड़े मुन्शी राधाकृष्णजी उनसे छोटे मुन्शी गंगाप्रसादजी यह दोनों रियासत जयपुर में ही रहे । सब से छोटे मेरे पूज्य पिता स्वर्गवासी मुन्शी मूलचन्द जी महकमे डाकखाने जात राजपूताने में नौकर हुये और सन् १८८७ में मुक़ाम अलीगढ़ संयुक्त प्रान्त (यू० पी०) में पोस्टमास्टरी से पेन्शन ली । उसके पश्चात् वह रियासत सिरमोर नाहन में सुपरिण्टेण्डेण्ट डाकखाने जात मुक़र्रर हुये परन्तु कुछ दिन वाद नौकरी छोड़ कर करके वहाँ से वापिस रियासत जयपुर राजपूताने में पधारे और सन् १८६६ में शरीर त्याग दिया, यहाँ हम चारों भाइयों की शिक्षा पूर्ण होने पर हम सब भाई भारतीय गवर्न्मेन्ट में नौकर हुए ।

जेष्ठ भ्राता स्वर्गवासी वावू शिवदयालसिंहजी हेड पोस्ट मास्टर कोटा (राजपूताना) थे । उनका शरीरान्त २५ मार्च सन् १६२५ में उसी स्थान पर हुआ । उनके दो सुपुत्र हैं । वड़े वावू

शम्भूदयालसिंह एम. ए. बी. एस. सी. एल. एल. बी. मुन्सिफ आज़मगढ़ (यू. पी.) में हैं, उनके छोटे भाई बाबू विश्वेश्वर दयाल सिंह B A C T जैपुर में असिस्टेण्ट महाराज हाईस्कूल जयपुर में मास्टर हैं। अब बाबू शम्भू दयाल सिंह के दो पुत्र विष्णु दयाल सिंह, राजेश्वर दयाल सिंह हैं। बाबू विश्वेश्वर दयाल सिंह के दो पुत्र महेश्वर दयाल सिंह व अलेश्वर दयाल सिंह हैं।

दूसरे जेष्ठ भ्राता बाबू हरदयालसिंहजी हैड पोस्ट मास्टर साँभर लेक (राजपूताना) थे। उनका भी स्वर्गवास १० दिसम्बर सन् १९३६ को जयपुर में होगया।

मेरे लघु भ्राता बाबू विश्वम्भर दयाल सिंहजी P. C S. पंजाब गवर्नमेन्ट में एक्सट्रा असिसटेन्ट कमिश्नर थे। उन्होंने दिसम्बर सन् १९३७ में अडिशनल डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पद से पैन्शन पाई। दुर्भाग्य वश उनका भी २३ अप्रेल सन् १९३८ को अचानक देहान्त होगया। उनके दो सुपुत्र हैं जेष्ठ पुत्र बाबू दिगम्बर दयाल सिंह B. A. L. L. B एडवोकेट हिसार में हैं। उनके भी दो पुत्र केशवदयाल सिंह और शङ्करदयाल सिंह हैं।

बाबू विश्वम्भर दयाल सिंह जी के छोटे पुत्र का नाम रामेश्वरदयाल सिंह है। वह अभी स्कूल में विद्याध्ययन कर रहा है।

मेरे दो विवाह सन् १८९४ और सन् १९०२ में हुये, पहली स्त्री से एक पुत्र बा० रामप्रताप सिंह और दूसरी स्त्री से एक पुत्र बाबू रघुवर दयाल सिंह हैं। बड़ा पुत्र बाबू रामप्रताप सिंह इस समय जयपुर में है। उसके एक लड़का है जिसका नाम जैदयाल सिंह है और वह जयपुर के मदरसे में पढ़ता है। मेरा छोटा पुत्र बाबू रघुवरदयालसिंह इस समय स्टेशन मास्टर (सुपीरियर ग्रेड) हिसार जंकशन है। पहली स्त्री के देहान्त होने पर मेरे चित्त की वृत्तियाँ संसार से विरक्त सी होने लगी किन्तु मैं उस समय किसी प्रकार से अध्यात्म की तरफ़ न जा सका। और गृहस्थ धर्म के पालन पोषण के कारण और सम्बन्धियों के समझाने बुझाने पर इसी स्थिति में रहा और मेरे कुटुम्बी सम्बन्धियों ने हठात् मेरे दूसरे विवाह का निश्चय कर ही दिया।

पुनः विवाह होने पर संसार की तरफ़ मेरा चित्त चला परन्तु मेरा वह विचार जो प्रथम स्त्री के मृत्यु पर संसार से विरक्त हुआ था उसका अङ्कुर जैसे का तैसा बना रहा। हरि

इच्छा बलवान दूसरी स्त्री का भी वैकुण्ठ वास २६ अगस्त सन् १९२२ को मुक़ाम इन्दौर में हुआ। उस समय से तो मेरे चित्त की वृत्तियाँ और भी दृढ़ हो गईं और संसार से एकदम ही विरक्त हो गईं और मैंने समझ लिया कि संसार अनित्य है और एक दिन सब को ही यहाँ से कूच करना होगा इसलिये कुछ अपने आत्मिक सुधार के लिये यत्न करना चाहिये।

मैंने महकमे डाकख़ाने जात सरकार हिन्द सन् १८९२ में मुलाज़िम होकर १८ अगस्त सन् १९२९ को सुपरिन्टेन्डेन्ट पोस्टऑफ़िस लोअर राजपूताना डिवीज़न अजमेर, पद से पेन्शन ली।

मार्च सन् १९३६ में जयपुर गवर्नमेण्ट ने मुझे सुपरिन्टैन्डैन्ट डाकखाने जात रियासत में नियुक्त करके महकमा डाकखाने की त्रुटियों को दूर करने का कार्य सुपुर्द किया। इस समय इस पद पर मैं काम कर रहा हूँ।

नोकरी के सिलसिले में दिसम्बर सन् १९११ में जब कि मैं इन्स्पेक्टर था श्रीमती राजराजेश्वरी मलकामोज़मा कुइन मेरी से

मुक़ाम कोटा राजपूताने पर भेंट होने का सौभाग्य प्राप्त हुवा। और इस सेवा के उपलक्ष में मुझको गवर्नमेण्ट हिन्द की तरफ़ से एक पदक (देहलीदरबारमेडिल) दिया गया।

३ जून १९१९ को जब कि मैं सुपरिण्टेण्डेण्ट मालवा डिवीजन इन्दोर में था, मुझको भारत सरकार की तरफ़ से हिज़ एक्सिलेन्सी लार्ड चेम्सफ़ोर्ड साविक़ वाइसराय और गवर्नर जनरल के समय में 'रायसाहब' का ख़िताब दिया गया। शुरू फ़रवरी सन् १९२२ को हिज़ रॉयल हाईनेस प्रिन्स ओफ़ वेल्ज़ से इन्दोर में भेंट होने का सौभाग्य प्राप्त हुवा। नौकरी के समय राजपूताना सैन्ट्रल प्रौविन्स और सैन्ट्रल इण्डिया के बहुत से रईस, रियासतों के दीवान, राजे और महाराजे साहिबान से और गवर्नमेन्ट हिन्द के बड़े२ अफ़सरान, एजेन्ट गवर्नर जनरल, रेजीडेन्ट, पोलिटिकल एजेन्ट और कमिश्नर साहिबान वगैरा से हमेशा मिलने का प्रायः अवसर प्राप्त हुवा करता था।

पाठक समझ सकते हैं कि सेवा धर्म बड़ा कठिन है। अतः शारीरिक और आत्मिक उन्नति ऐसे उत्तर दायित्व के समय

जब कि रात दिन ध्यान उसी सेवा धर्म में लगा हुआ है मनुष्य कैसे प्राप्त कर सकता है ?

पेन्शन लेने के पश्चात् विचार हुआ कि अब मेरा क्या कर्त्तव्य है ? क्योंकि अब स्वतन्त्र हुआ एवम् अपने अन्तिम जीवन में पुनः विचार आया. कि अब अपनी आध्यात्मिक उन्नति करने का अच्छा अवसर है । जैसा कि मनुष्य का धर्म है कि गृहस्थ धर्म को पालन कर ईश्वर की ओर ध्यान लगावे और अपने मोक्ष मार्ग की तलाश करे । इन्हीं शुभ विचारों की प्रेरणा से श्री गुरु महाराज श्री १०८ श्री स्वामी योगानन्दजी महाराज के चरणकमलों में ध्यान गया और उसी समय अर्थात् १९३० में जयपुर में उनसे दीक्षा ली । उन्हीं की प्रेरणा और उपदेश से मुझे कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ और उन्ही के आदेशानुसार मैंने फुलेरा (रियासत जयपुर) में श्रीमान् पूज्य पं० मुन्नीलाल जी मिश्र रिटायर्ड हेड पण्डित रेल्वे स्कूल फुलेरा से श्रीमद् भगवद्गीता पढ़ी और अनेक शंकाओं पर वाद विवाद करने का अवसर भी मिला शंकायें निवृत्त भी हुईं उन्हीं विचारों के कारण अपने मन के उद्गारों को प्रगट करने के लिये अपनी

बुद्धि के अनुसार भजनों में रचकर पाठकों के सम्मुख यह पुस्तक उपस्थित की है आशा है कि आप काव्य की त्रुटियों पर ध्यान न देकर मेरे मन के उद्गारों पर ही ध्यान देंगे ।

आपका सेवकः—

जयपुर सिटी
गुरुपूर्णिमा
२२ जुलाई
१९३८

रायसाहिब किशनदयालसिंह, रिटायर्ड सुपरिण्टेण्डेण्ट डाकखानेजात लोवर राजपूताना डिवीजन अजमेर वहाल—

सुपरिण्टेण्डेण्ट
स्टेट पोस्टल डिपार्टमैण्ट
जयपुर

॥ ॐ ॥

॥ धन्यवाद ॥

निम्न लिखित महानुभावों ने मुझ को इस पुस्तक के रचने में और इस की त्रुटियाँ दूर करने में बहुत कुछ सहायता की है। मैं इन सब महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

१:—पं० मुन्नीलाल जी मिश्र रिटायर्ड हेड पंडित रेल्वे स्कूल, फुलेरा

२:—राय सा० मुं० शिवसहाय साहिब कुलभूषण रिटायर्ड सुपरिन्टेन्डेन्ट आर० एम० एस० अम्बाला

३:—मु० चिरंजीलाल साहिब रिटायर्ड हैड वर्नाक्यूलर क्लर्क, हिसार व हाल तहसीलदार रियासत भज्जी

४:—मु० श्यामस्वरूप साहिब रेवेन्यू कमिश्नर, रियासत डूँगरपुर

५:- स्वर्गीय बाबू विश्वम्भरदयालसिंह सा० एक्सट्रा असिस्टेन्ट कमिश्नर और ऐडीशनल डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट हिसार (पंजाब)

६:-बाबू शम्भूदयाल सिंह एम० ए० एल० एल० बी बी० एस० सी० मुन्सिफ आजमगढ़ (यू० पी०)

७:-बाबू बालमुकुन्द सा० भटनागर रिटायर्ड ट्रेज़री ओफीसर साँभर लेक,

८:-महन्त श्री रामेश्वर दास जी राधाकिशन का कुण्ड जयपुर

९:-पं० मुरलीधर जी जयपुर

१०:-श्री स्वा० नृसिंहदेवजी सरस्वती श्रीदेवर्षि-आश्रम (मानदुर्ग) जयपुर ।

* ओऽम् *

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके ।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य वाह्यत ॥

य० अ० ४० मं ५

॥ भावार्थ ॥

वह ईश्वर चलता है और नहीं भी चलता है। वह दूर है नही पास है। वह इस सब जगत के भीतर है। वह ही इस सब संसार के वाहर भी है।

॥ नज़्म में ।

वही चलता है और चलता नहीं है।
वही है दूर फिर नज़दीक सब से है॥
वही वाहर और अन्दर है जगत के।
वड़े से है वड़ा सूक्ष्म से सूक्ष्म है॥

॥ दोहा ॥

जिहि प्रकाश लहि कुमुद मन विकसत आनँद पाय ।
ताहि छाँडिमन हा: लगो माया मोहहि धाय ॥

❀ आरती श्रीगुरुमहाराज की ❀

ओ३म् जय गुरु देव नमो, स्वामी जय गुरु देव नमो ।
भक्त जनन मन भंजन, रन्जन देव गुरो ॥ ओ३म्०॥१॥
भव सागर से तारो शरण परो तेरे ।
हिरदय ज्ञान प्रकाशो पाप हरो मेरे ॥ ओ३म्०॥२॥
पूज्य देव तुम मेरे भव बन्धन हारी ।
काम क्रोध मद मारो गुरुवर दुख टारी ॥ ओ३म्०॥३॥
चरण शरण में आयो विनवत कर जोरी ।
जन्म मरण दुख टारो, विनय सुनो मेरी ॥ ओ३म्०॥४॥
नैया पार लगावो गुरुवर गुरु मेरी ।
कर जोरे मैं ठाड़ो शरण गही तेरी ॥ ओ३म्०॥५॥
विषय विकारन घेरो दुख पाऊँ भारी ।
इनसे शीघ्र बचाओ आत्मिक दुख हारी ॥ ओ३म्०॥६॥

स्वारथ रत जग नाते अंत नहीं मेरे ।
कहि के मेत निकारें माया के चेरे ॥ ओ३म्०॥७॥
गुरु पद रज शिर धारूँ नयनन में आँजूं ।
ज्ञान चक्षु खुल जाये मगनानन्द राजूँ ॥ ओ३म्०॥८॥
ब्रह्मानन्द पद पाऊँ मोक्ष होय मेरी ।
जननी उदर न आऊँ आशिश हो तेरी ॥ ओ३म्०॥९॥
रन्जन हो मेरो हे आनन्द दाता ।
बार बार शिर नाऊँ गुरुवर जग त्राता ॥ ओ३म्०॥१०॥
संत समागम होवे परमानन्द दाता ।
योगानँद तुम स्वामी जग तारण जाता ॥ ओ३म्०॥११॥
के. डी. सिंह कर जोरे नत मस्तक ठाडो ।
आत्मिक ज्ञान प्रसारो प्रेम पगो गाढ़ो ॥ ओ३म्०॥१२॥

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति ।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥

यजु० अ० ४० मं. ६

॥ भावार्थ ॥

जो मनुष्य सब प्राणियों और पदार्थों को अपनी ही आत्मा में देखता है और अपनी आत्मा को सब प्राणियों और पदार्थों के भीतर देखता है। वह कभी पाप नहीं करता।

॥ नज़्म में ॥

जो यकसाँ देखता है आत्मा में,
सभी प्राणी पदारथ इस जगत में ।
और देखे आत्मा को एकसा सब में,
नहीं निन्दित है वो संसार सागर में ॥

अध्याय १–गुरुमहिमा

स्वा:—स्वामी योगानन्द न आये सारी अवधी बीत गई ॥

मी:—मीठे मीठे वचन सुनाओ,

अब तुम देर जरा न लगाओ ।

यो:—योगासन तो अब बतलाओ,

अन्तिम इच्छा यही ॥१॥

गा:—गायन करते हैं नर नारी,

रखते सभी भरोसा भारी ।

नं:—नँदनदन की भारी महिमा,

हमसे न जाय कही ॥२॥

द:—दर पर खड़ा हुआ हूँ तेरे,

छोड़े मैने धन्धे सिगरे ।

जी:—जीवन रह गया है थोड़ासा,

इसे सँभालो तो सही ॥३॥

की:—कीन्हा प्रभू का सुमिरण नाहीं,

लिपटा पड़ा था विषयन माहीं ।

ज:—जब से दर्श हुआ प्रभु तेरा,

शंका नांय रही ॥४॥

य:—यह तो के. डी. सिंह की इच्छा,

नैया पार लगे तो अच्छा ।

सच्चा रस्ता गुरु दरशाओ,

स्वामी शरण गही ॥५॥

मेरे स्वामी हो तुम पूरण, मुझे अपना बना लेना ।
मिटा कर पाप सब मेरे, मुझे भक्ती दिला देना ॥१॥
रहे हरदम यह मन मेरा, गुरू महाराज चरणन में ।
सिवा इसके नहीं धन्धा, मुझे मारग लगा देना ॥२॥
करे हैं पाप बहुतेरे, नहीं ईश्वर का डर माना ।
श्री महाराज कृपा से, मुझे इन से बचा देना ॥३॥
गवाँई उम्र सारी घर के इन, धन्धों में फँस फँस कर ।
लिया नहिं नाम मालिक का, मुझे भी गुरु सिखा देना॥४॥
जब आया वक़्त चलने का, डराया मौत ने मुझ को ।
तो शरणागत हुआ गुरू के, मुझे तुम अब बचा लेना ॥५॥
मिटाकर अपनी हस्ती को, शरण में आपके आया ।
तो फिर आवा गमन से भी, मेरा पीछा छुड़ा देना ॥६॥
कहा गीता के पढ़ने को, गुरू ने मंत्र बतलाया ।
बताकर योग के रस्ते, मुझे योगी बना देना ॥७॥
पढ़ा गीता को जो मैंने, हुक्म गुरुदेव का माना ।
मगर मैं तुच्छ बुद्धि हूँ, इसे कुछ तो बढ़ा देना ॥८॥

ये गीता ज्ञान मुश्किल है, गुरू महाराज समझाना ।
श्री योगानन्द स्वामी जी, भक्त अपना बना लेना ॥९॥
मिटे अज्ञानता मेरी, वृत्ति मेरी बदल जाये ।
इसी संसार सागर से, मेरी नौका तिरा देना ॥१०॥
अरज़ करता है के. डी. सिंह, गुरू महाराज चरणन में ।
बता के ज्ञान के मारग, मुझे मुक्ती दिला देना ॥११॥

शरण अपने में तुम लेलो, गुरू महाराज प्यारे हो ।
गुरू भक्ती मुझे देदो, गुरू महाराज प्यारे हो ॥ १ ॥
नहीं हो द्वेष कुछ मुझको, न हो कुछ कामना मन में ।
इसी विधि ज़िन्दगी बख्शो, गुरू महाराज प्यारे हो ॥२॥
न हाथी में न कूकर में, न इन्साँ में फ़रक़ कुछ हो ।
समदृष्टी मेरी भी हो, गुरू महाराज प्यारे हो ॥ ३ ॥
हों सोना चाँदी और मिट्टी, बराबर दास के मन में ।
न रग़बत हो न नफ़रत हो, गुरू महाराज प्यारे हो ॥ ४ ॥
मेरे सब कर्म अच्छे हों, मगर फल तुम पै निर्भर हो ।

जहाँ सम्बन्ध पल स हो, गुरू महाराज प्यारे हो।
रही अभिमान से बुद्धी, हमेशा लिप्त विषयों में।
समेटो जग की माया को, गुरू महाराज प्यारे हो ॥ ५ ॥
नज़र एक रहम की करदो, जो बेड़ा पार होजाये।
मेरे स्वामी दया करदो, गुरू महाराज प्यारे हो ॥ ६ ॥
रहूँ सुख शान्ती से मैं, भरोसा हो गुरूजी पर।
मेरा विश्वास इसमें हो, गुरू महाराज प्यारे हो ॥७॥
नवा मस्तक बना भिक्षुक, मैं योगानन्द का प्यारे।
लगाकर अपने तन मन को, गुरू महाराज प्यारे हो ॥८॥
अरज़ के. डी. की इतनी है, गुरू महाराज के आगे।
किनारे पर लगा मुझको, गुरू महाराज प्यारे हो ॥९॥
किनारे पर लगा मुझको, गुरू महाराज प्यारे हो ॥१०॥

आवें मिलकर सब सत्संगी,
गुरू के चरणन में शीश नवावें ।
जो हैं पूरे पाप विनाशक,
उन के ही गुण सब जन गावें ॥१॥
यह हम से पतितन पर दया करें,
जब हम भी उनसे प्रेम करें ।
उनकी कृपा दृष्टि जब होगी ।
मन वांछित फल पा जावें ॥२॥
क्लेश मिटेंगे इस जीवन के,
जन्म सुफल अपना भि करें ।
ज्ञान को पाकर उन से ही हम,
योग में आगे क़दम धरें ॥३॥
के॰ डी॰ सिंह सब मोह को छोड़ो,
सब का एक हि हो मक़सद ।
हटें नहीं पीछे को प्यारो,
ईश्वर सुमिरन ही वे हद करें ॥४॥

करो मन और तन अपना, गुरु महाराज के अर्पण ।
संभालो अपने जीवन को, लगाकर योग में मन तन ॥१॥
श्री स्वामी दयालू हैं, करेंगे पार वे तुमको ।
वह इस संसार सागर से, तरा देंगे अरे ओ मन ॥२॥
अचल श्रद्धा हमारी हो, कटें संकट हमारे सब ।
न समझो भेद गुरु ईश्वर, यही तुम सोच लो सब जन ॥३॥
जगत स्वामी के मिलने का, तरीक़ा एक ही है बस ।
कमर बांधो भजे जाओ, लगाकर योग के आसन ॥४॥
सुरत और शब्द का जपना, बताया है गुरुजी ने ।
वह धीरज और निश्चय से, किये जाओ हर यक पल छिन॥५॥
जब हो परकाश ईश्वर का, गुरु मौजूद हों वहां पर ।
तभी हो ध्यान त्रिकुटी का, खुले जब ज्ञान का दर्पण ॥६॥
बचें फिर सिर्फ छै मन्ज़िल, जो तय हों बाद में उसके ।
छुटे पीछा जब ही इन से, न होगा फिर मरन जीवन ॥७॥
सफ़र आगे का के. डी. सिंह, बड़ा मुश्किल है तय करना ।
भरोसा कर गुरुजी पर, करेंगे पार वह भगवन ॥८॥

मेरी है प्रार्थना तुम से, लगादो मोक्ष मारग पर ।
सिवा सतगुरु नहीं समरथ, बतादो दूसरा यहाँ पर ॥१॥
जुगत सारी वह बतलाके, शुद्ध तन मन को करवा के ।
सुरत और शब्द समझाके, चला दो योग मारग पर ॥२॥
वह सच्चा जाप सिखलावो, व प्राणायाम करवाओ ।
भेद सन्तों का बतलाओ, बिठादो योग आसन पर ॥३॥
ज्ञान ईश्वर का बतलाकर, सारे पापों को हटवाकर ।
प्रकाश त्रिकुटी में दिखलाकर, मिलादो मुझको जगदीश्वर॥४॥
हटा दुनियाँ का झगड़ा तुम, हरी हर नाम रटना तुम ।
जगत को समझो सपना तुम, भक्त बनजाओ भक्तिकर ॥५॥
क़ैदी सिंह छुडा बन्धन, भजन कर करले पावन तन ।
वशकर अपना चंचल मन, लगालो ध्यान श्रीगुरुवर ॥६॥

करूँ विनती दयानिधि से, दया भंडार खोले वह ।
पतित पावन है परमेश्वर, सुनेगा टेर मेरी वह ॥१॥
करे वह शुद्ध मन मेरा, हटाकर राग द्वेषों से ।
मेरी तीक्षण करे बुद्धी, सँभाले वृत्ति मेरी वह ॥२॥
मुझे दे ज्ञान पूरण वह, हटाकर पाप तापों को ।
मग्न हो जाऊँ मैं उसमें, छुटादे क़ैद मेरी वह ॥३॥
स्वयम् सेवक हूँ मैं उसका, कृपा निधि नाम उसका है ।
मेरी आशा करे पूरण, बढ़ादे भक्ति मेरी वह ॥४॥
मेरे ईश्वर रहम कर दे, मुझे भक्ती का वर दे दे ।
मेरा जीवन सुफल कर दे, बढ़ादे शक्ति मेरी वह ॥५॥
श्री योगानन्द स्वामी जी, शरण अपनी में लेलो अब ।
ये आशा करता के. डी. सिंह, सुधारें बुद्धि मेरी वह ॥६॥

गुरु रक्षा करावेंगे, गुरु सेवा बतावेंगे ।
गुरु धीरज धरावेंगे, गुरु हमको जगावेंगे ॥१॥

गुरु नौका तरावेंगे, गुरु बन्धन कटावेंगे ।
गुरु योगी बनावेंगे, गुरु मारग लगावेंगे ॥२॥

गुरु मन्ज़िल करावेंगे, गुरु दर्शन दिलावेंगे ।
गुरु भगवत मिलावेंगे, गुरु संकट मिटावेंगे ॥३॥

मेरी अज्ञानता हरकर, गुरु ही शान्ति देवेंगे ।
गुरु पूरण हमारे हैं, गुरु हमको उबारेंगे ॥४॥

गुरु मंतर पढ़ावेंगे, भजन हमको सिखावेंगे ।
गुरु ईश्वर हैं के. डी. सिंह, गुरु जीवन सुधारेंगे॥५॥

गुरुजी पर भरोसा है, गुरुजी प्राण प्यारे हैं ।
गुरु सेवा में आजाओ, गुरु संकट निवारे हैं ॥
गुरुजी ज्ञान दाता हैं ॥१॥

गुरु भक्ति करो मन से, गुरु अधमोद्धारे हैं ।
गुरुजी शान्तिदाता हैं ॥२॥

गुरु रक्षा के हम भूखे, गुरु शिक्षा के हम प्यासे ।
गुरु माता पिता भाई, पिता माता हमारे हैं ॥
गुरुजी प्रेमदाता हैं ॥३॥

गुरु मन्तर सिखादेंगे, गुरु मद मोह टारेंगे ।
गुरुजी सर्व सुख दाता श्रीसद्गुरु ही सहारे हैं ॥४॥

गुरु गोविन्द आगे हैं, नवाऊँ किसको मस्तक मैं ।
गुरुवर जाऊं बलिहारी, गुरु आपत्ति टारे हैं ॥
गुरुजी प्राण दाता हैं ॥५॥

मेरी श्रद्धा बढादेंगे, मुझे भक्ती दिलावेंगे ।
गुरुजी मोक्षदाता हैं, मेरी नौका को तारे हैं ॥६॥

संभालो आप के. डी. सिंह, बढालो आत्म शक्ति को ।
जन्म अपना सुफल करलो, सद्गुरु ही सहारे हैं ॥
गुरुजी शक्तिदाता हैं ॥७॥

शरण गुरुदेव के आया, बचालो नाथ तुम मुझको !
मुझे भक्ति दिलाकर फिर, जगादो नाथ तुम मुझको॥१॥
मेरी बिगड़ी दशा को अब, बनादो शीघ्र हे स्वामी !
करो किरपा चरण से अब, लगालो नाथ तुम मुझको ॥२॥
चलूँ मैं छोड़कर बस्ती, मिटाकर अपनी सब हस्ती ।
फिरूँ बन बन में मैं स्वामी, चला दो नाथ तुम मुझको ॥३॥
भजूँ हर दम मैं मालिक को, यही अब ध्यान हो मेरा ।
न सुख दुख में तुम्हें भूलूँ, निभालो नाथ तुम मुझको ॥४॥
न जाड़े से न गरमी से, कोई सम्बन्ध हो मेरा ।
सहूं सीतोष्णादि सब, सहा दो नाथ तुम मुझको ॥५॥
मुझे शिक्षा दो इक ऐसी, कि छूटें फन्द सब उससे ।
मार्ग मन शुद्ध करने का, बतादो नाथ तुम मुझको ॥६॥

कि जिसके बाद मुझको कुछ न करना ही रहे बाकी।
फ़कत भगवद् भजन में ही, जमा दो नाथ तुम मुझको ॥७
करी है भेंट यह अस्तुति, श्री योगानन्द के चरणन।
गुज़ारिश सिंघ के. डी. की, सँभालो नाथ तुम मुझको ॥८

बनालो भक्त तुम मुझको, मिटादो पाप सब मेरा।
मेरी वृत्ती को अब बदलो, हटादो ताप सब मेरा ॥१॥
करो उपदेश इक ऐसा, कि जिससे दुख निवारन हो।
हरी से प्रेम हो मेरा, छुटे आवागमन फेरा ॥२॥
न काम और क्रोध मुझको हो, न दें दुख लोभ मोहादी
न हो मद और कुछ मुझको, मिटे हिरदे का अन्धेरा ॥३॥
मिले भक्ती मुझे तेरी, छुटूँ दुनियाँ के बन्धन से।
पाक पापों से हो जाऊं, ज़ुबां पर नाम हो तेरा ॥४॥
मगर इसमें ज़रूरत है, सिर्फ़ स्वामी की किरपा की।
तो के. डी सिंह तिर जावे, बनालो चर्णों का चेरा ॥५॥

॥ ॐ ॥

मुझे ज्ञान ईश्वर करादो गुरूजी ।
मेरा ध्यान उसमें लगादो गुरूजी ॥१॥
अन्धेरा हृदय में है अज्ञान तमका ।
मेरे मन में दीपक जलादो गुरूजी ॥२॥
करे पैर लम्बे मैं सोता हूं ग़ाफिल ।
इस निद्रा से मुझको जगादो गुरूजी ॥३॥
नहीं मुझ में शक्ति रही है ज़रासी ।
भक्ति दे शक्ती बढ़ादो गुरूजी ॥४॥
पड़ा हूं मैं चरणों में स्वामी तुम्हारे ।
मेरी लाज रख के तरादो गुरूजी ॥५॥
यहां दुःख ही दुःख साथी बने हैं ।
जगद्वन्द्वों के फन्दे छुड़ादो गुरूजी ॥६॥
जीवन को सुखमय बनादो गुरूजी ।
मैं क्या हूं मेरे को सिखादो गुरूजी ॥७॥
हुआ किस तरह बन्ध मेरा यहां पर ?

यह संसार क्या है बतादो गुरूजी ॥८॥

प्रभो! भेद विद्या अविद्या व माया।

सबक् ब्रह्म विद्या पढ़ादो गुरूजी ॥६॥

सताया गया है बहुत के. डी. सिंह अब।

परम शान्ति आसन बिठादो गुरूजी ॥१०॥

मुझे ईश भक्ति की बू छा गई है।

हरारत उसी की मुझे आ गई है ॥१॥

बसी है सुगन्धी उसी की मुझी में।

मुरली की वह धुन सुनाई गई हैं ॥२॥

मुझे राग द्वेषों से मतलब ही क्या है?

मेरे दिल की हालत वो अब ना रही है ॥

मेरा मोह मद मुझसे जाता रहा है।

हर एक सुर में आवाज़ "हं" आरही है ॥४॥

नहीं स्वाँस कोई वृथा मुझको आवे।

सोहं जप में सूरत बसाई हुई है ॥५॥

मैं मशकूर हूं उन गुरूदेवजी का।
जिन्हों की यह युक्ति सिखाई हुई है ॥६॥
निर्भय रहो तुम ज़रा के॰ डी॰ सिंह अब।
करो भक्ति युक्ति बताई गई है ॥७॥

धरो ध्यान भगवद् का प्रेमी बनो तुम।
करो सेवा गुरु की तो सेवी बनो तुम ॥१॥
जला करके तन मन की हर एक ख़्वाहिश।
मिलो उससे जाकर वही एक वारिस ॥२॥
भुला करके अच्छे बुरे कर्म सारे।
साक्षी करो जीव को बन्धु प्यारे ॥३॥
जपो मन से सोहँग हर स्वांस में तुम।
अटल ध्यान रख कर के परकाश में तुम ॥४॥
उजाले में गुरू देव को देखलो जब।
फिर आगे की मंजिल को चलदो ज़रा तब ॥५॥
सफ़र के॰ डी॰ सिंह का भी ऐसा ही होगा।
गुरू की दया से वह पूरा ही होगा ॥६॥

जहाँ में है नहीं कोई, जो संकट को कटा देवे ।
सिवा गुरुदेव स्वामी के, जो ईश्वर से मिला देवे ॥१॥

करें दिन रात हम चर्चा, उसी भगवान् प्यारे की ।
मगन हर वक्त उसमें हों, वह फिर ज्ञानी बना देवे ॥२॥

दयालु वो तो ऐसा है, कि जिसका है नहीं सानी ।
जगद् धारण वो करता है, वही रस्ता लगा देवे ॥३॥

उसी का आसरा लेवें, उसी में मन को लय कर दें ।
उसी की याद करते हैं, वही संकट मिटा देवे ॥४॥

यह के. डी. सिंह बतलाता, गुरु कृपा से निश्चय है ।
करो अभ्यास तन मन से वो शत्रु से बचा देवे ॥५॥

ॐ यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः ॥

॥ यजु० अ० ४० मं० ७ ॥

॥ भावार्थ ॥

ब्रह्म के अद्वैत यानी जीव और ब्रह्म की एकतापन को देखते हुये, ज्ञानी पुरुष को अपनी इस हालत में सब प्राणी आत्मा ही दीखते हैं, इस दशा में मोह और शोक कहां हैं? यानी कुछ भी नहीं हैं।

॥ नज़्म में ॥

जो ज्ञानी ब्रह्म को अद्वैत देखे है,
वह जीव और ब्रह्म की एकता को देखे है ॥
प्राणी सब में देखे आत्मा अपनी,
दशा उसमें नहीं कुछ भेद देखे है ॥
कहां है मोह शोक ऐसों को दुनियां में,
नहीं हर्गिज़ उन्हें कुछ भी व्यापे है ॥

❀ आरती ❀

जय जय योगानन्द स्वामी, जय जय योगानन्द ।
भव सागर से हमें उबारो, मेटो जगके द्वन्द्व ॥जय२योगा०॥
संत समागम कारण स्वामी, जन्म लियो जगमें ।
भक्ती प्रेम सिखायो, दीन्हो परमानन्द ॥जय२ योगा ॥२॥
सद्गुरु हमें बताकर स्वामी, जन्म हमार बनायो ।
मारग मोक्ष दिखायो स्वामी, तुम हो जगदानन्द जय२यो.॥३
परम पदारथ हो तुम स्वामी, हो अन्तर्यामी ।
समरथ सद्गुरु चरन नवावें, जय २ अद्वैतानंद जय २यो.४
सबके तीरथ सब के आशय, सब के हो भगवन्त ।
ज्ञान ध्यान तुम हमको देते, करते सुख आनन्द जय२ यो.५
चरण शरण में आकर प्रभुजी, माँगू भुजा पसार ।
जीवन बंध छुडाओ स्वामी, देओ ब्रह्मानन्द ॥ज.२ यो.६॥
भव सागर यह कठिन बहुत है, नौका पार करो ।
बीच भवँर से पार करैया, तुम हो योगानन्द ॥ज.२ यो.७
अष्ट पदी आरति यह गावैं, शुद्ध हृदय मन से ।
तीनों कष्ट निवारन होवैं, पावें सर्वानन्द ॥जय२ योगा.८॥

———

ओ३म् जय जगदीश हरे, प्रभु जय जगदीश हरे।
तुम प्राणन के दाता, ईशपरात्परे ॥ ओ३म् जय॥१॥
तुमको निशि दिन ध्यावत, ब्रह्मा विष्णु महेश।
तुम हो जग के स्रष्टा प्रभु, स्वामी सर्वेश ॥ओ३म् जय॥१॥
दीनन पर तुम दया करो, प्रभु हमको पार करो।
तुम बिन औरन कोई, विपदा शीघ्र हरो ॥ओ३म् जय॥३॥
तुम मन रंजन अरु दु,ख भंजन, तुम सत्पुरुष हरी।
हम सेवक तुम स्वामी, हन पर कृपा करी ॥ओ३म् जय॥४॥
पूर्ण ब्रह्म पुरुषोत्तम ज्ञानी, जीवन रखवारे।
हम हैं बाल तुह्मारे, कष्ट हरो सारे ॥ ओ३म् जय ॥ ५ ॥
चरण शरण में ले लो अपने, हम पर दया करो।
भक्ती प्रेम बढ़ाओ, मन को शुद्ध करो ॥ ओ३म् जय ॥६॥
श्रद्धा करो अटल हे स्वामी, सेवा में लीजे।
कर्मा करम तुम्हारे अर्पन, भक्ती वर दीजे ॥ओ३म् जय॥७॥
अष्ट पदी सिंह के. डी. गावे, मिल कर ध्यान धरें।
क्रूर कपट भग जावें, ईश्वर प्रेम करें ॥ ओ३म् जय ॥८॥

❋ आरती ❋

ओ३म् जय गुरुदेव नमो । पिता जय गुरुदेव नमो ॥

तुम हो जग के तारक, हमरे प्राण पती ।

भक्तन दुःख निवारक, पूरण शुद्ध मती ॥ओ३म जय॥१॥

तुम हो परम कृपालू, सब पर दया करी ।

बड़े २ पापिन की नैया, तुमने पार करी ॥ओ३म जय॥२॥

तुम हो जगत प्रकाशक, आत्मिक बल कारी ।

तुमहि परम पुरुषोत्तम स्वामी, भक्तन सुख कारी ॥ओ.ज.॥३

तुमरो आदि न अन्त कोई, तुम व्यापक आतम हरी ।

अन्तर्यामी हो प्रभु सब के, सर्वाधार हरी ॥ओ३म जय॥४॥

सब से प्रेम तुम्हारा, सब के ईश जती ।

सब के प्रति पालक हो, हे! परमेशयती ॥ओ३म जय॥५॥

तुम बिन और न दूजा, किसकी आस करें ।

भक्ती भाव बढ़ाओ, तुम्हरो ध्यान धरें ॥ओ३म जय॥६॥

भारत दुःख निवारो, काटो सकल कलेश ।

कुशल शान्ति हो जावें. पाप हरो परमेश ॥ओ३म जय॥७॥

योगानंद सतपुरुष दया निधि, भारत अभय करो ।

के. डी. सिंह की विन्ती, सुख मय समय करो ॥ओ३म जय.

॥ ओ३म् ॥

" आरती "

ओ३म् जय जय जय गुरुदेश

जय आनन्द कन्द सुख राशी, जय स्वामी सर्वेश। ओ३म्॥

गौर शरीर शान्त सुखदायक, परम पूज्य सुनीत।
सदा कृपालु रहो भक्तन पर, विमल तुम्हारी रीति॥ओ३म्॥

ज्योतिर्पुञ्ज प्रकाश रूप मृदु, मधुर मनोहर मूर्ति।
स्वयं प्रकाश नित्य अविनाशी, भक्त प्रेम रस स्फूर्ति॥ओ३म्॥

जीवन-मुक्त, विदेह, धर्म-धुरि, धरि नर हरि अवतार।
काम क्रोध मद लोभ जनित प्रभु, हरते पंच विकार॥ओ३म्॥

योगानन्द रूप में प्रकटित, परब्रह्म परमेश।
के. डी. सिंह का बन्ध छुड़ाओ, काटहु संसृति क्लेश॥ओ३म्॥

———

" आरती "

ओ३म् जय जय जय श्रीगुरुदेव

जय सुख दायक सन्तन नायक, वरदायक वरदेव। ओ३म्॥

जय उपकारी पातक हारी, जय स्वामी सुर सेव ।
जय सुख कारी भक्त अधारी, परम पूज्य परमेव ॥ओ३म्॥

अशरन-शरन दीन हितकारी, जय ज्ञाता भव भेव ।
शरण पड़े की लाज सदा ही, विमल तुम्हारी टेव॥ओ३म्॥

भवसागर के फन्द छुडाओ, काटहु दुख अवरेव ।
पार करहु अनहद नौका में, भकन एकहिं खेव ॥ओ३म्॥

जय गुरुवर्य पूज्य पद स्वामी, जय सद्गुरु गुणनेव।
के. डी. सिंह आश है तेरी, चरण शरण में लेव ॥ओ३म्॥

" आरती "

ओ३म् जय सद्गुरु स्वामी

अविरल भक्ति ज्ञान वर दीजे, कीजे मोहि अनुगामी ॥ओ३म्॥

डूबत गर्त बाँहि गहि मेरी, चरण शरण लीजे ।
मोह विकार दूर कर भव के, भय से अभय करीजे ॥ओ३म्॥

भक्ति-प्रेम अनुरक्त सुथिर चित, सत्सङ्गति लागे ।
मोह जनित संसार स्वप्न से, विरति होय मन जागे ॥ओ३म्॥

'सोहमस्मि' में वृत्ति अखण्डित नित नव लव लावे ।
सद्गुरु कृपा परम-पद-स्थिति, पूरण आनँद पावे ॥ओ३म्॥

भूरि भावना भरी हृदय में, पुर वहु अन्तर्यामी ।
के. डी. सिंह चरण पावन में, नमो नमामि नमामि ॥ओ३म्॥

" आरती "

ओ३म् जय गुरुदेव हरी

भक्त हेत धरि देह सगुण, प्रभु जन पर कृपा करी॥ओ३म॥

जन रञ्जन, गञ्जन, अघ अवगुण, भञ्जन दुःख वरूथा।
परम कृपालु सहायक स्वामी, गुरु सन्तन यूथा ॥ओ३म॥

रहित विकार परे त्रिय गुण ते, लोक वेद ते न्यारे।
जीवन मरण विहीन अमर प्रभु, जग माया विस्तारे॥ओ३म॥

अगणित चरित करहु जन कारण, गुरु गोविन्द स्वरूपा।
आरत कष्ट हरहु दासन के, परे जे भव कूपा ॥ओ३म जय०॥

के.डी सिंह वचन मान मन, जो कोई तुमको ध्यावे।
आवागमन विमुक्त होय नर, पूरण पद पावे ॥ओ३म॥

———

*यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवा भूद्धि जानतः ।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्व मनुपश्यतः ॥

॥ यजु॰ अ॰ ४० मं० ७ ॥

संसार में मनुष्य मात्र अपने प्रिय पदार्थों के वियोग से शोक और मोह को प्राप्त होते हैं । प्राणी जितनी अधिक ममत्व बुद्धि रखता है, उतना ही अधिक दुःख उसके वियोग से पाता है । हमको जिन प्राणियों से विशेष सम्बन्ध नहीं है उनके वियोग से उतना दुःख नहीं होता जितना कि घनिष्ट सम्बन्ध वालों से होता है, इससे विदित है कि ममता ही दुःख का कारण है, न कि वियोग; क्योंकि ममता के न होने में वियोग के होने पर भी मनुष्य को कुछ दुःख नहीं होता । ऐसा हम संसार में देखते हैं। यह ममता तभी छूटती है जब कि मनुष्य जगत को एक आत्ममय देखता है=अर्थात् शरीरादि के होते हुये भी उनमें उस की ममत्व बुद्धि नहीं रहती । अर्थात सब को ही आत्मा

जानकर उनमें एक आत्मा ही देखता है फिर उसको मोह शोक कुछ भी नहीं होते।

॥ नज़्म में ॥

ज़रा देखलो मंत्र सप्तम यजुर्वेद में,
जो रोशन है अध्याय चालीस में।
मनुष्य भागी होते हैं मोह शोक के,
जभी अपने प्यारे से हैं वो बिछुड़ते॥
रखें हैं जो ममता वह ज्यादा किसी से,
दुखी उतने ज्यादा वह उसके जुदी से।
वह हैं जिनसे सम्बन्ध हमारा नहीं है,
तो उनके वियोगों की परवाह नहीं है॥
यह साबित हुआ है कि ममता ही कारण,
वियोग है नहीं फिर तो शोकों का कारण।
वियोग होते होते न हो गर जो ममता,
मनुज को नहीं फिर ज़रा शोक होता॥

मनुज जब कि ममता से ही छूटता है,
जगत भर को एक आत्मा देखता है ।
शरीरों को भिन्न २ भी पाते हुये,
एक ही आत्मा सब में होते हुए ॥
रहा तब तो वह शोक मोह से हुआ है,
तो फिर मोक्ष मारग भी आगे धरा है ।
यही सात्विक ज्ञान है सिंह के डी.,
विचारोगे गर तुम तो पावोगे मुक्ती ॥

---
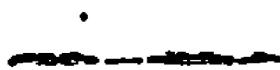
* पृष्ठ ५२ में यह मन्त्र दुबारा जान-बूझ कर विषय के स्पष्टीकरणार्थ दिया गया है ।

वेदान्त शिक्षा पर:—

रमो वेदान्त शिक्षा में, करो शोधन जगत ईश्वर।
विचारो उनकी ग्रंथी को, समझकर ध्यान दे दे कर ॥१॥
करो शुभ कर्म दुनियां के, समझकर फ़र्ज़ तुम अपना।
नख्वाहिश हो इरादा हो, न खुद गर्ज़ी कभी करना ॥२॥
करो शुभ कर्म निश दिन तुम, न रक्खो आश फल की को।
यही है साग भक्तों का, अगर इच्छा तुम्हारी हो ॥३॥
पढ़ो गीता की सुर सम्मति, बनाओ वैसे लक्षण तुम।
सुधारो अपने जीवन को, समझ अध्याय सतरह तुम ॥४॥
अगर ख्वाहिश तुम्हें कुछ है, करो तुम मोक्ष की इच्छा।
अगर संगत को जी चाहे, करो सत्संग सतगुरु का ॥५॥
अगर श्रद्धा तुम्हारी हो, लगो "सोहँग" अपने में।
मिलेगी मोक्ष तब तुमको, टरन की नाहिं सपने में ॥६॥
करो विश्वास पूरण गर, छुटो बन्धन से फ़ौरन तुम।
यह के. डी. सिंह निश्चय है, बनाओ ऐसा जीवन तुम ॥७॥

———

ॐ स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्ध-मपाप विद्धम्। कविर्मनीषीःपरिभूः स्वयंभूर्याथा तथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छा-श्वतीभ्यः समाभ्यः॥

यजु. अ. ४० मंत्र ८ ॥

अर्थः—जो सब जगत का पैदा करने वाला है, शरीर रहित, छिद्र रहित, नाड़ी आदि से अलहदा, पवित्र, निष्पाप, संसार के चल और अचल वस्तुओं को देखने वाला, मन का साक्षी, सब का मालिक, कारण रहित है, सर्व व्यापक है, वह ही परमात्मा है, उसने हमेशा के लिये ठीक२ पदार्थों को रचा है।

नज़्म में

जो है पैदा कुनिन्दा इस जगत का,
करें तारीफ़ उसकी बन के शैदा॥
शरीर उसके नहीं है छेद बिन वह है,
अलहदा बन्ध नस नाड़ी से वह है॥

पवित्र, निष्पाप मन का साक्षी वो है,
पदारथ चल अचल को देखता वो है ॥
वही मालिक सभी का एक दाता है,
बिला कारण सर्व व्यापी विधाता है ॥
हमेशा के लिये सारे पदारथ हैं,
रची उसने सभी वस्तु हैं दुनियां में ॥

दैवी सम्पत्ति श्री भगवद् गीता अध्याय सोलह

यह भारत वर्ष ऐसा था, जहां देवों का वासा था ।
हर एक वेदोक्त चलता था, हर एक ईश्वर को पाता था ॥१॥
बचे थे राग द्वेषों से न परवा थी किसी की भी ।
करें थे वे हवन सन्ध्या, हर एक ईश्वर का ज्ञाता था ॥२॥
अभय जीवन था हर इक का, शुद्ध अन्तः करण उनका ।
हर इक ज्ञानी व योगी था, हर इक दम दान करता था ॥३॥
पढ़े थे वेदोपनिषदादि, नियम से कर्म करते थे ।

भरे पूरे थे लज्जा से, दया धीरज भी आता था ॥४॥
अहिंसा धर्म पालक थे, नहीं वह क्रोध करते थे ।
वह सच्चे और त्यागी थे, नहिं अभिमान माना था ॥५॥
मृदुल और शान्त थे चित के, बैर चुगली से नफ़रत थी ।
क्षमा करते थे जीवों पर, हर एक ही शुद्ध रहता था ॥६॥
चपलता थी नहीं उनमें, हुये तेजस्वि थे वह सब ।
न करते लोभ आयूभर, यज्ञ तप कर सिखाया था ॥७॥
महा भारत के अवसर में, सुनाई दैव सम्पत्ती ।
हुआ सत्संग अर्जुन से, श्री हरि ने ही बखाना था ॥८॥
दशा बिगड़ी हमारी क्यों, ज़रा हम नींद से जागें ।
सुधारें अपने कर्मों को, जो ऋषियों ने बताया था ॥९॥
अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा, पढ़ें वेदों को हम दिन से ।
छुड़ावें फन्द बन्धन का, यही प्राचीन रस्ता था ॥१०॥
तमन्ना करता के० डी० सिंह, इन्हें फिर देवता देवी ।
कुशल पूर्वक यह भारत हो, यह ऋषियों का विचारा था ॥११॥

असुर सम्पत्ति श्री भगवद् गीता अध्याय सोलह

असुर सम्पत्ति के लक्षण, कहे गीता में गाकर के ।
यह कहते कृष्ण अर्जुन से, सुनो तुम चित लगाकर के ॥१॥

निशाचर तो शुरू से ही, रहे हैं नीच पाखंडी ।
दबाया है कठोरता ने, तरफ अपने लगाकर के ॥२॥

नहीं कुछ ज्ञान रखते हैं, प्रवृत्ति निवृत्ति मार्ग का ।
नम्रता से रहित अज्ञान में, सब मन लगा कर के ॥३॥

कटें बन्धन भव क्योंकर, तिरें संसार सागर से ।
समझते हैं वह दुनिया को, बिना भगवान ईश्वर के ॥४॥

बताते काम ही कारण, सभी संसार रचना का ।
न रखते शुद्धता आचार, सभी झूठ बना कर के ॥५॥

हुआ है नष्ट मन उनका, दुष्ट हैं कर्म सब उनके ।
हैं बैरी धर्म के पक्के, अल्प बुद्धि बना कर के ॥६॥

दंभ और मान में घुसकर, अहंकारी बने सब ही ।
प्रलय ही अन्त है उनका, रहें कैसे सना कर के ॥७॥

वह आशा धन की करते हैं, गज़ब उम्मेद उनकी है।
सताने और जीवों को, वह भूतों को मना करके ॥८॥

नरक के ये हैं दरवाज़े, काम अरु क्रोध कहते हैं।
चलो सद्वृत्ति मारग पर, लोभ मन से हटा करके ॥९॥

ज़रा ईश्वर नज़र एक बार, करदे सिंह के० डी० पर।
जलादे ज्ञान का दीपक, भक्त हमको बनाकर के ॥१०॥

———

ॐ अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्या मुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्याया ᳬरताः॥

यजु. अ. ४० मं० ६

अर्थः—जो लोग अविद्या की उपासना करते हैं। वे गाढ़े

नज़्म में

उपासना अविद्या की जो करता है,

वह अन्धकार गाढ़े में पड़ता है ॥

जो विद्या में ही तत्पर इस जनम में,

वह अन्धकार ज्यादा में गिरता है ॥

जो करता ज्ञान कांड की उपेक्षा को,

लगा रहता हुवा करमों में है जो ॥

जनम लेकर के बारम्बार इस जग में,

पड़ा रहता जनम मृत्यु के दुःखों में ॥

जो करता सिर्फ़ ज्ञान कांड की चर्चा,

वह अपने जन्म को निष्फल बना लेता ॥

लक्षण ब्रह्म के

बतावें ब्रह्म के लक्षण, सुधारें जन्म अपना हम।
लगावें ध्यान ईश्वर से, जपें शुभ नाम उसका हम ॥१॥
दयालू है, वह रक्षक है, वह माता अरु पिता अपना।
अकायम् अब्रणम् है वो, लगावें चित्त उससे हम ॥२॥
है एक रस सब में वो व्यापक, नहीं नस नाड़ि बन्धन में।
शुद्ध, निष्पाप, वह दाता, शरण जावें उसी के हम ॥३॥
वह अन्तर्यामि है सबका, नहीं पैदा किसी से है।
जगद् धारण वह करता है, गिरें चरणों उसी के हम ॥४॥
है बुद्धिमान वह ऐसा, नहीं सानी जगत में है।
मनीषी है स्वयंभू है, कहें गुण गण उसी के हम ॥५॥
करें पूजा उसी की हम, हों जिसमें सार यह लक्षण।
मिलेगी मोक्ष फिर हमको, पड़ें चरणान उसी के हम ॥६॥
यह लक्षण ब्रह्म के बतलाये हैं, वेदा में ऋषियों ने।
नहीं संशय है कुछ हमको, करें भक्ती उसी की हम ॥७॥
दयालूपन पै आशा कर, ये के. डी. सिंह निश्चय कर।
विचारें ब्रह्म लक्षण को, सुनें चर्चा उसी की हम॥८॥

ॐ अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदा हुर विद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्ताद्विच चक्षिरे ॥

यजु० अ० ४० मं० १०

भावार्थ :—

विद्या से और ही फल कहते हैं। अविद्या से और फल कहते हैं। इस प्रकार धीर पुरुषों के वचन हम सुनते हैं। जो हमारे प्रति उसका उपदेश कर गये हैं। अर्थात धीर पुरुषों ने ज्ञान और कर्म का फल पृथक् पृथक् वर्णन किया है। यथा ज्ञान का फल मोक्ष है इसी प्रकार यज्ञादि कर्म का फल स्वर्ग है।

नज़्म में

वह विद्या से कोई और फल बताते हैं।
अविद्या से कोई और फल सिखाते हैं ॥

सुने फिर धीर पुरुषों के वचन को।
उन्हों ने दे दिया उपदेश हम को॥
बताया है उन्हीं पुरुषों ने ऐसा।
अलहदा फल है ज्ञान और कर्म का जैसा॥
मिले है मोक्ष ज्ञानी को बिना खटका।
स्वर्ग पाता है करमी भी हमेशा॥

तारीफ़ भगवान् के नाम की

हों जिस में धर्म ज्ञान वैराग्य, श्रीयश सम्पूर्ण ऐश्वर्य ॥
इन्हीं का नाम है 'भग', रहें यह नित ही जिस में॥
रहित प्रतिबन्ध से होकर, जो हो गुण युक्त इन छः में॥
वही भगवान् जीवों का, वही है आसरा सब का॥
वह के. डी. सिंह मालिक है, वही हम सब का पालक है॥

ॐ विद्याञ्चाऽविद्याञ्च यस्तद्वेदोभयᳪसह ।
अविद्यया मृत्युंतीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥

यजु० अ० ४० मं० ११

भावार्थ :—

जो पुरुष विद्या और अविद्या दोनों को भी साथ साथ जानता है वह अविद्या से मौत को तर कर और विद्या से मोक्ष को प्राप्त होता है। आर्थात् ज्ञान के द्वारा कर्म को और कर्म द्वारा ज्ञान को सफल बनाता है उनको ज्ञान सहित कर्म मृत्यु से तैराता है और कर्म सहित ज्ञान मोक्ष का अधिकारी बनाता है।

नज़्म में

जो जाने साथ साथ ही विद्या अविद्या वह,
तिर कर मृत्यु से फिर मोक्ष पाता वह ॥

शब्द विद्या से मतलब ज्ञान का है,
अविद्या लिया मतलब करम का है ॥

मनुज जो ज्ञान द्वारा कर्म करता है,
उसे फिर ज्ञान मृत्यु से तिराता है ॥

जो करता है कर्म को ज्ञानवान होकर,
हुआ अधिकारी वह फिर मोक्ष का बनकर ॥

जीव के लक्षण

दिखाओ जीव के लक्षण, बताये हैं जो ऋषियों ने ।
करें हैं देह धारण वह, जनमते मरते लोकों में ॥१॥

है इच्छा द्वेष से पूरण, करें सुख दुःख से सम्बन्ध ।
है ज्ञान और प्रयत्न उन में, फँसे हैं जग के भोगों में ॥२॥

फ़रक़ इन्सां में इतना है, दिया विज्ञान उसको है ।
नहीं पक्षी मे है ज़ाहिर, नहीं जलचर पशु को है ॥३॥

ॐ अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूति मुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्या छं रताः ॥

॥ यजु० अ० ४० सं० १२ ॥

जो लोग असम्भूति की उपासना करते हैं वे गाढ़ अन्धकार में प्रवेश करते हैं और जो सम्भूति में लगे हुये हैं वे उससे भी अधिक अन्धकार में प्रवेश करते हैं। अर्थात् जो ब्रह्म के स्थान में बिला पैदा हुये प्रकृति की ही उपासना करते हैं वे अन्धकार में गिरते हैं और जो उससे पैदा हुये पदार्थ रुप जगत में ही ईश्वर बुद्धि से पूरण हैं के तो महा अन्धकार में पड़ते है।

नज़्म में

उपासना जो असम्भूति की करते हैं,
महा अन्धकार में वो पड़ते हैं ॥
लगे सम्भूति में है जो के इन्सां,
पड़े हैं घोर अन्धकारों में वह इन्सां ॥

है मतलब इसका ऐसा अय त्रिरादार,

समझना खूब इसको दिल लगाकर ।

अनादी ब्रह्म को जो छोड़ देते हैं,

बिना पैदा प्रकृति को जो भजते हैं ॥

अँधेरे में गुजर ऐसों का होता है,

नहीं कुछ चाँदना उनको भी मिलता है ।

बजाय ब्रह्म माने अनादी इस जगत को,

चले जाते हैं वह घोर अन्धकारों को ॥

लक्षण जगत के

रखे जब पैर दुनियां में, तमाशा यह जगत का है ।
अगनित जीव हैं जहाँ में, तमाशा यह जगत का है ॥१॥
सभी मशगूल कर्मों में, ये जड़ चैतन्य दोनों ही ।
नहीं परवाह उकबा की, तमाशा यह जगत का है ॥२॥
कोई आता कोई जाता, कोई रोता है हँसता है ।
किसी शय को न स्थिरता है, तमाशा यह जगत का है ॥३॥

किसी के घर बजें बाजे, करैं कोइ मातमी सब मिल ।
कहीं मंगल कहीं दंगल, तमाशा यह जगत का है ॥४॥
सभी का दिल है खाने में, जो षट् रस स्वादजिह्वा के ।
ये भोजन हैं न आत्मा के, तमाशा यह जगत का है ॥५॥
रखें हैं आत्मा भूकी, विना विज्ञान के भोजन ।
हज़ारों में कोई इक जन, तमाशा यह जगत का है ॥६॥
मिले साधू फ़कीरों से, मिले सन्तों महन्तों से ।
फँसे दुनियां में हैं वो भी, तमाशा यह जगत का है ॥७॥
फिरे हम भी पहाड़ों में, सफ़र कर जंगलों का भी ।
मिला ज्ञानी नहीं वां भी, तमाशा यह जगत का है ॥८॥
जहां होती कथायें है, कोई सुनता नहीं चित्त से ।
श्रोता सोटा हो सुनते, तमाशा यह जगत का है ॥९॥
रहित विश्वास सब ही हैं, नहीं है शान्ती उन में ।
कुकर्मों से दुःखी मन में, तमाशा यह जगत का है ॥१०॥
कहीं है खूब ही बारिश, कहीं है खेत सब सूखे ।
कहीं प्राणी मरें भूखे, तमाशा यह जगत का है ॥११॥

जो सोचा क्या सबब इस का, निवारण दुःख हो क्योंकर ?
लेवें वो शरण जगदीश्वर, तमाशा यह जगत का है ॥१२॥

मिटा अज्ञानता अपनी, मिले जब आत्मा भोजन ।
होय ब्रह्मात्म सम्मेलन, तमाशा यह जगत का है ॥१३॥

उजाला करके के. डी. सिंह, जला कर ज्ञान का दीपक ।
लखो अपने में हरिव्यापक, तमाशा यह जगत का है ॥१४॥

ॐ अन्यदेवा हुः सम्भवादन्य दाहुरसम्भवात् ।
इतिशुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विच चक्षिरे ॥

॥ यजु० अ० ४० मं० १३ ॥

भावार्थ

सम्भूति से और ही फल कहते हैं। असम्भूति से और ही फल कहते हैं। इसी लिये धीर पुरुषों के वचन हम सुनते हैं जो हमारे लिये उसका उपदेश कर गये हैं। अर्थात्=कार्य की उपासना से एक समय सुख और कारण से प्राकृतिक विज्ञान की वृद्धि होती है।

नज़्म में

अलहदा फल है सम्भूति, असम्भूति अलहदा है ।
सुनों तुम धीर पुरुषों को, दिया उपदेश उनका है ॥
उपासना करक कारज की, समय भर सुःख मिलता है ।
उपासना करके कारण की, वृद्धि विज्ञान मिलता है ॥

प्रार्थना

अभय कर दो मुझे स्वामी, छुटा दुनियां के फन्दों से ।
करूँ निश दिन तेरे गायन, प्रेमसे स्तुतियें छन्दो से ॥१॥

नहीं हो दूसरा धन्दा, लगे मन तेरे चरणों में ।
उजाला ज्ञान दीपक हो, सुफल हो जन्म कर्मों से ॥२॥

मेरा जीवन सुधारो तुम, बचा करके कुकर्मों से ।
करूँ संध्या हवन निश दिन, करूँ सत्संग सन्तों से ॥३॥

सुनूँ गुण गान तेरे मैं, फिरे दिल लोक कामों से ।
बनूँ सत्सङ्गि पूरा मैं, बचूँ मैं फिर अधर्मों से ॥४॥

मुझे दे ज्ञान की विरती, मेरा चित्त हो अचल तुझ में ।
उभारो नौका हे भगवन्, न डूबे सिन्धु के जल में ॥५॥

नहीं पछतावो के डी सिंह, छुड़ा देगा वो फन्दों से ।
दया अपनी दिखा देगा, बचाकर जग के द्वन्दों से ॥६॥

———

पिलादे जाम उल्फ़त का, हटा दिल की कदूरत को।
नुक़स देकर के भक्ति का, भुलाकर सब ज़रूरत को ॥१॥

सरूर जब उसका आजावे, दिखाना ज्ञान का खाना।
शिक़म मेरा जो भर जावे, सुनाना ओ३म् का गाना ॥२॥

मुझे मद होश करके तब, ज़रा क़दमों लगा देना।
खुलें जब ज्ञान के चक्षु, मुझे ज्यारत करा देना ॥३॥

मेरा दिल साफ़ कर देना, गुनाहों के हो बख्शिन्दा।
करम की नज़र कर देना, रहम कर के खुदा बन्दा ॥४॥

गुनाहों को मिटा देना, शरीयत पर चला देना।
मेरा इन्साफ़ कर देना, ज़रा रहमत बता देना ॥५॥

हमेशा ध्यान के. डी. सिंह, लगा भगवत् के क़दमों में।
करो ख्वाहिश उभरने की, न पड़ दुनियां के सदमों में ॥६

सुधारूँ अपने जीवन को, भजूं तुझ से लगा लो को।
मग्न होजाऊँ अजपा में, वृथा खोऊँ न श्वासों को ॥१॥

मुझे घेरा है विपदा ने, फँसा मन मोह द्वन्द्वों में।
बड़ी मुश्किल निकलने में, हटा कर मोह जालों को ॥२॥

शरण किस के चला जाऊँ, सिवा तेरे नहीं कोई।
तो फिर ले शीश चरणों में, मिटाकर मेरे पापों को ॥३॥

तेरी ही महर से स्वामिन, हो बेड़ा पार एक दिन को।
तो फिर ध्याऊँ तुझी को मैं, जला कर अपने पापों को॥४॥

मुझे भक्ती की श्रद्धा हो, मिले कुछ ज्ञान का अधिकार।
करूँ मन अपना लय तुझ में, छुटा कर बन्ध कर्मों को॥५॥

ये ही इच्छा है के. डी. सिंह, पड़ूँ चरणों में मालिक के।
मिले जब मोक्ष का रस्ता, खतम कर अपने जन्मों को॥६॥

विकट संसार सागर है, मेरी नौका तिरा देना ।
पड़ा हूँ बीच धारा में, किनारे से लगा देना ॥ १ ॥

विकट सङ्कट ने घेरा है, है गठरी सर पै पापों की ।
मुझे चरणों में रख लेना, मेरा बोझा हटा देना ॥ २ ॥

मेरी तो नाव भारी है, बनो खेवट मेरे कारण ।
कि बेड़ा पार हो जिस से, अभय मुझको बना देना ॥३॥

तजूँ मैं पाप कर्मों को, धरूँ फिर ध्यान ही तेरा ।
दया कर ज्ञान का दीपक, मेरे हिरदे जला देना ॥ ४ ॥

जगादो ज्ञान की ज्योति, जो होवे चाँदना दिल में ।
देके दर्शन श्रीमुख का, सभी शङ्का मिटा देना ॥ ५ ॥

बनो सन्यासि के. डी. सिंह, छुड़ा बन्धन गृहस्थी का ।
यही तो मुक्ति मारग है, सबक सब को सिखा देना ॥६॥

हरी हर से विनती हमारी यही है ।

ईश्वर से अरजी हमारी यही है ॥ १ ॥

गुनाहों के बन्धन से बच जाँय हम ।

हमारी दशा पर करो कुछ करम ॥ २ ॥

अँधेरे से करदो उजाला ज़रा ।

हक़ीक़त को दिल में जमा दो ज़रा ॥ ३ ॥

जगादो भरतखण्ड के प्राणियों को ।

सत-पथ बतादो नरनारियों को ॥ ४ ॥

करो शुद्ध हृदय सुफल हो जनम ।

मिटे मन से अज्ञान का जो है तम ॥ ५ ॥

अब के. डी. सिंह को शरण अपनी में लो ।

निगाह मुझ पै रहमत की कुछ तो करो ॥६॥

बना मुतलाशी तेरा हूँ, प्रकाश अपना बता देना।
बड़ा लज्जित हूँ मैं दिल में, गुनाहों से बचा देना ॥ १ ॥

तुझी से लो लगाई है, छुटा कर रिश्ता और नाता।
नहीं प्यारा है कुछ मुझको, मेरी रक्षा करा देना ॥ २ ॥

धरा ये शीश चरणों में, अभय करकमलों को रखो।
मुझे कृतार्थ कर देना, गोद अपनी बिठा लेना ॥ ३ ॥

मेरी विनती सुनो स्वामी, दया कर के मेरे ऊपर।
करो कल्याण भारत का, सभी ज्ञानी बना देना ॥ ४ ॥

यहाँ बरसे सदा सतयुग, करें सब प्रेम से भक्ती।
निराशी हो न के॰ डी॰ सिंह, उसे भी तो तिरा देना ॥ ५ ॥

दिलादे प्रेम भक्ती को मुझे भगवन् ।
बढ़ादे ज्ञान शक्ती को मुझे भगवन ॥१॥
मैं सोता तान खूँटी हूँ जहां में ।
जगादे ख्वाब गफ़लत से मुझे भगवन् ॥२॥
मेरा दिल पाक हो, रँगों में रंग जाये ।
पिलादे जाम अमृत को मुझे भगवन् ॥३॥
तेरे आगे खड़ा हूँ मैं बहुत दिन से ।
दिलादे अपनी रहमत को मुझे भगवन्॥४॥
मुझे मखमूर करदे योग साधन में ।
लगादे ध्यान अपना ओ मुझे भगवन् ॥५॥
करम और रहम तेरे का सहारा है ।
दिखादे आप अपने को मुझे भगवन् ॥६॥
अरज़ सिंह के. डी. की हैं आपके आगे ।
बिठाले गोद मुक्ती दो मुझे भगवन् ॥७॥

मुझे दो ज्ञान वो भगवन्, मनन कर मुनि विचरते हैं।
पड़ा हूँ दुःख सागर में, मुझे यह दुःख अखरते हैं ॥ १ ॥

विषय और भोग में रह कर, हुवा कुरबान मैं इन पर।
पकड़ कर मेरे तन मन को, परेशां मुझको करते हैं ॥ २ ॥

यह दुर्बल मुझको करते हैं, मेरी श्रद्धा घटाते हैं।
वह चंचल दिल को करते हैं, स्थिरता उसकी हरते हैं॥३॥

तेरा जब नाम जपता हूँ, मेरे मन को लुभाते हैं।
तू ही तो कर्ता धर्ता है, तेरे ये सब करश्मे हैं ॥ ४ ॥

मेरा पीछा छुटा इन से, करूँ फिर ध्यान तन मन से।
न करना फिक्र के.डी. सिंह, दास को वो न तजते हैं॥५॥

सहायक है नहीं दूजा, सिवा तेरे यह सोचो जी।
यहाँ शत्रू लगे पीछे, हमारी लाज रखलो जी ॥ १ ॥

करें हृदय को वस अपने, मगर रोके हैं ये शत्रू ।
इन्हीं को कर प्रभू मग़्लूब, तसव्वुर आप का हो जी ॥२॥

अभय होकर तुम्हारी याद, करें निश दिन तुम्हारे गान ।
दिलादो भक्ति का वरदान, चरणकमलों में रखलो जी॥३॥

इसी मारग पै लगजावें, यह दृष्टि सामने करके ।
चले जावें विला दहशत, सफ़ा मारग को करदो जी ॥४॥

शस्त्र हम ज्ञान का रक्खें, बनावें उसको हम साथी ।
क़लम शत्रू का सर करदें, हमें तुम शक्ति वो दो जी ॥५॥

करें हम लय की इच्छा तव, हमें फिर तो मिलालो जी ।
विनय है सिंह के. डी. की, ज़रा गोदी विठा लो जी ॥६॥

कहाँ हो प्रेम के दाता? दशा मेरी बना देना ।
मेरी अज्ञानता हर कर, मुझे ज्ञानी बना देना ॥१॥

प्याला ज्ञान का भर कर, पिलादो नाथ तुम मुझको ।
मुसीबत आने जाने की, मेरे गिरधर टला देना ॥२॥

तुम्हारा नाम ही भज कर, भगत जन पार होते हैं ।
मेरी नैया को सागर के, किनारे पर लगा देना ॥३॥

तुम्हारा ध्यान मुझको हो, तुम्हारा नाम लब पर हो ।
तुम्हारी खोज में भगवन्,ख़तम जीवन करा देना ॥४॥

शरण में आ पड़ा स्वामी, यह के. डी. सिंह चरणों में ।
तुम्हारे चरण कमलों का, मुझे सेवक बना लेना ॥५॥

सहारे तुम्हारे में रखलो हरीजी,
मुझे ज्ञान विज्ञान दे दो हरीजी ।
तुम्हारा ही सेवक बना हूँ मैं अब तो,
मुझे शिक्षा दे दो तुम्हीं तो हरीजी ॥
समय खो दिया है यह दुनियां में फँसकर,
हृदय शुद्ध कर दो ज़रा तो हरीज़ी ॥

सँभालो दशा को यह बिगड़ी हुई है,
कृपा करके इसको बना दो हरीजी ॥
तुम्हारे शरण अब गिरा सिंह के. डी.,
मुझे अपने चरणों में लेलो हरीजी ॥

———

यह विपदा कैसी आई है, इसे ईश्वर टला देना ।
यह कैसा आना जाना है, इसे मालिक मिटा देना ॥१॥
किया था कौल यह मैंने, नहीं भूलूँगा तुझको मैं ॥
मगर फिर भूल मैंने की, मेरी गलती भुला देना ॥२॥
गया कुछ वक्त विषयों में, नहीं की याद मालिक की ।
अधर्मों को धरम समझा, धरम में चित लगा देना ॥३॥
करूँगा याद अब तेरी, सहारा तेरा जाना है ।
तू ही अब पार कर मुझको, मेरी विपदा छुड़ा देना ॥४॥
करें हैं कर्म जो कुछ भी, सभी अर्पण करे तेरे ।
यह के. डी. सिंह अब कहता, मुझे फल से बचा देना ॥५॥

———

तुम्हारे प्रेम भक्ति से, हमें तो ज्ञान होता है ।
तुम्हारी आश आशा में, तुम्हारा ध्यान होता है ॥ १ ॥
तुम्हारे हुक्म से बाहर, नहीं हम हैं कभी हर्गिज़ ।
हमारे मन में बसते हो, मेरा मन स्थान होता है ॥ २ ॥
तुम्हारा ध्यान हम रखकर, तुम्हें हम खोजते फिरते ।
टटोला जब कि दिल अपना, मिलन गुन गान होता है ॥३॥
बसो हो जिसके हिरदय में, करो तुम शुद्ध उसको भी ।
हटाकर राग द्वेषों को, हमें विज्ञान होता है ॥ ४ ॥
उभारो नाथ हम सब को, नज़र किरपा की हम पर हो ।
भजन नित करके के. डी. सिंह, प्रेम भगवान् होता है ॥५॥

निपट बुद्धि की शुद्धि हो, जभी जानूँ तुम्हें घनश्याम ।
मेरा मन शान्त हो कोमल, मिटें सब पाप तन के श्याम ॥१॥
नहीं है पार कुछ तेरा, तेरी महिमा तो अद्भुत है ।
तेरे गुनगावाद मीठे हैं, लगे प्यारा तुम्हारा नाम ॥२॥

तरन तारन तू जग का है, जगत स्वामी है दुनियां का ।
करम फल का तू दाता है, बिना तेरे नहीं है काम ॥३॥

भरोसा है तेरे ऊपर, रहम तेरे का मैं ख्वांहां ।
दयानिधि तुझको कहते हैं, दया कर दे दया के धाम ॥४॥

यह के. डी. सिंह मांगे है, तेरे आगे पसारे हाथ ।
मेरा मन शुद्ध तू करदे, दयालू तू मेरा है राम ॥५॥

ॐ सम्भूतिञ्च विनाशञ्च यस्तद्वेदो भयꣳसह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते ॥

य० अ० ४० मं० १४

अर्थ :—

जो पुरुष सम्भूति को और असम्भूति को भी साथ साथ जानता है। वह अम्भूति से मौत को तर कर सम्भूति से मोक्ष को प्राप्त होता है। अर्थात् कारण से कार्य की उत्पत्ति और कार्य्य से कारण की सफलता समझते है, यह कारण ज्ञान से मृत्यु को तर कर कार्य्य के ज्ञान से जीवन मुक्त हो जाते हैं।

नज़्म में

जो सम्भूति असम्भूति का ज्ञाता है।
वो तर कर मौत को फिर मोक्ष पाता है ॥
हुई उत्पत्ति कारण से कार्य की।

न उलफ़त न कुलफ़त से कुछ काम तेरा ।
जुवाँ पर रमप.ति रखा कर अभागे ॥ ६ ॥

न्याय अन्याय में न पड़ना कभी भी ।
प्रभु के तू चरणों पड़ा कर अभागे ॥ ७ ॥

न कण्ठी तिलक छाप से तुझको मतलब ।
हरी हर को घट में लखा कर अभागे ॥ ८ ॥

न रग़बत न नफ़रत किसी से तू करना ।
ज़रा ईश स तो डरा कर अभागे ॥ ८ ॥

दिल अपना सुधारा करो के. डी. सिंह अब ।
श्री राम चरणों पड़ा कर ह्मभागे ॥ ६ ॥

जिसे चक्षु कहते वो, चक्षू नहीं है ।
अगर अपने आपे को, देखा नहीं है ॥१॥

किसी काम का है नहीं, कान उसका ।
अगर चर्चा ईश्वर की, सुनता नहीं है ॥२॥

नहीं नाक से काम लेता है हरगिज़ ।
जो भगवत् की खुशबू में बसना नहीं है ॥३॥

है पाषाण से सख्त दिल उस बशर का ।
जिसे रहम जीवों पे आता नहीं है ॥४॥

नहीं है ज़ुबां उसकी शीरीं कभी भी ।
जो गुण गान ईश्वर के गाता नहीं है ॥५॥

नहीं हाथ हैं जिनसे होता नहीं दान ।
कोई लाभ ऐसों से होता नहीं है ॥६॥

वृथा जन्म ऐसे जनों का रहा है ।
अगर अपना जीवन सुधारा नहीं है ॥७॥

वह संसार सागर में डूबा रहेगा ।
अगर ध्यान ईश्वर पे जमता नहीं है ॥८॥

ज़रा शोध दिल में अरे सिंह के. डी. ।
बिना भक्ति ईश्वर के तिरता नहीं है ॥९॥

ख़तम जिस वक्त दुनियां का, मेरा सम्बन्ध हो जावे ।
सफ़र आगे का करने को रूह स्वछन्द हो जावे ॥१॥
सुनो भाई अज़ीज़ों और, अक़ारिब दिल लगा कर तुम ।
हटाना दिल को दुनियां से, मेरा दिल पाक हो जावे ॥२॥
खुशी होकर सुनाना नाम, ईश्वर का मुझे तुम सब ।
दुआ तुम सिर्फ़ यह करना, कि मेरी मोक्ष हो जावे ॥३॥
जनाज़ा जब मेरा घर से, निकल करके चला जावे ।
करो गुण गान ईश्वर क मुझे संतोष हो जावे ॥४॥
मेरा क़ालिब मिले जब, पांच तत्वों में वो जल-जलकर ।
न करना रञ्ज तुम हरगिज़ मेरा मन शान्त हो जावे ॥५॥
करोगे मातमी गर तुम, नहीं मानो नसीहत को ।
न तुमको हाथ कुछ आवे, ना मुझको कुछ भी मिलजावे ॥६॥
सिवा इसके कि मेरा दिल, लगे दुनियां के रिश्तों में ।
भुलाकर ध्यान ईश्वर का मुझे बंधन न हो जावे ॥७॥
बजाये फ़ायदे के तुम, बहुत नुक्सान कर दोगे ।
बनोगे दुःख दाई तुम, मेरा चित भ्रान्त हो जावे ॥८॥

बहुत हुशियार रहना, और निर्भय होके के. डी. सिंह ।
नहीं गुमराह होना तुम, ये बेड़ा पार हो जावे ॥८॥

न मांगो भीख तुम हर्गिज़, नहीं ये कर्म अच्छा है ।
मुनी ऋषियों ने बतलाया, नहीं ये द्विजधर्म भिक्षा है ॥१॥
जो कोइ मांगता है दान, पसारे अपने हाथों को ।
न प्रेम और मान रहता है, श्री गौरव भी जाता है ॥२॥
विदा होती है बुद्धि भी, अलग होते हैं यह सब गुण ।
बिना इन पांच रत्नों के, मनुष्य मिट्टी का पुतला है ॥३॥
नहीं खोवो यह तुम लक्षण, जवाहर हैं ये इन्सां के ।
अगर खोये इन्हें तुमने, तो ये जीवन ही बिरथा है ॥४॥
विचारो मन में के. डी. सिंह, अभागे जन ये खोते हैं ।
बिला खोये कोई इन्द्रिय, नहीं हकदार होता है ॥ ५ ॥

करें हम प्रेम हरशय से, यह रचना हैगी ईश्वर की।
निकालें द्वेष को मन से, है आज्ञा ये ही ईश्वर की ॥१॥

विचारें तो ज़रा दिल में, यह रचना किसने रच रक्खी।
पदारथ हैं दिये किसने, दियी है शक्ति ईश्वर की ॥२॥

हमी भोगे हैं भोगों को, यह सब भोग हैं उसके।
वही करता है हम सब का, अलौकिक करनी ईश्वर की ॥३॥

तो फिर हम द्वेष क्यों रक्खें, बुरा मालिक को लगता है।
करें दृष्टि को सम हम सब, है मरज़ी यही ईश्वर की ॥४॥

नहीं तुम द्वेष को करना, नहीं नफ़रत कभी करना।
यह जीवन फिर तो सुधरेगा, मिलो ये युक्ति ईश्वर की ॥५॥

यह के॰ डी॰ सिंह कहता है सफ़ा मारग को करता है।
सभी में आत्मा यक सां, करो सब भक्ति ईश्वर की ॥६॥
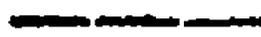
करो तुम कर्म ऐसे ही, कि जिनसे मोक्ष मिलता हो।
कठिन मारग है यह ऐसा, मुसाफ़िर कोई चलता हो ॥१॥

शुरू में प्रेम पैदा हो, तुम्हारे मन के अन्दर हों ।
रहे दिल में नहीं कुछ द्वेप, सभी से प्यार करना हो ॥२॥

बुरा कुछ तुम नहीं कहना, बुरा कुछ तुम नहीं सुनना ।
बुरा कुछ तुम नहीं देखो, अगर इस मार्ग चलना हो ॥३॥

दशा ऐसी तुम्हारी हो, करो फिर भक्ति को मन से ।
जगत भक्ती तुम्हारी हो, जगत मालिक को भजना हो ॥४॥

करो फिर ईश्वर भक्ती, लगाओ चित्त उसी में तुम ।
भुलाओ अपने जीवन को, कठिन मारग पै फिरना हो ॥५॥

येही जब ज्ञान हो जावे, तो देखो सब में इक ईश्वर ।
रहो फिर मग्न दुनियां में, किसी से, फिर न डरना हो ॥६॥

बनो ज्ञानी तुम ऐसे भी, नहीं सुध होवे जीवन की ।
तुम्हारा ज्ञान साथी हो, तो फिर जीना न मरना हो ॥७॥
करो निश्चय यह के. डी. सिंह, हमेशा ज्ञान साथी है ।
सफ़र इस बिन नहीं अच्छा, कठिन सागर जो तिरना हो॥८॥

मन्दिर में बहुत प्रेम से जाते हैं पुजारी ।
वहां जाके बहुत करते हैं फरियाद भिखारी ॥१॥

कोई फल कोई फूल बताशे भी चढ़ाते ।
काटें हैं वह अज्ञान को लेकर के कुल्हाड़ी ॥२॥

दुनियां के दिखावे को वह करते हैं भजन भी ।
लगती है उन्हें धुन कि वह बढ़ जांय अगाड़ी ॥३॥

करतव्य, अकरतव्य, का नहिं ज्ञान ज़रा भी ।
बतलाते हैं ईश्वर को अगाड़ी ही अगाड़ी ॥४॥

घर छोड़ लगाते हैं वह चक्कर जहां तहां ।
पर मिलता नहीं उनको वह श्याम मुरारी ॥५॥

खोज उसकी न कर बाहिर तू के. डी. सिंह प्यारे ।
तुझ में ही रहता हर दम वह कुंज विहारी ॥६॥

अरे मूरख भजो गोविन्द, भज गोविन्द गोविन्दा

अखीरी वक्त मरने का, जब हासिल तुमको होता है।
डुकरियां का सुमिरना ही, नहीं वाजिब यह तुमको है॥
नहीं रक्षा तुम्हारी वो, करेगा याद कर लेना।
कहा आचार्य शङ्कर ने, बताया ज्ञान तुमको है॥१॥अरे०॥

लड़क पन की अवस्था को, गँवाई खेल में तुमने।
खर्च करदी जवानी भी, गृहस्थी बन के दुनियाँ में॥
बुढ़ापे में लगी चिन्ता, मगन उन में रहा हरदम।
भजा नहिं नाम भगवन का, भुलाया दिल से उसको है॥२॥अरे०॥

गला जब जिस्म तेरा है, सफेदी बालों पर आई।
रिहाई दाँतों ने पाई, बिला दाँतों के मुख जो है॥
चले फिर लकड़ी के बल से, बुढ़ापा देखलो ऐसा।
तभी भी दुष्ट आशा ने, नहीं छोड़ा जो तुमको है॥३॥अरे०॥

गुज़रते रातदिन होकर, सुबह शाम आती जाती है।
ऋतु भी तो गुज़रती हैं, उमर भी तो गुज़रती है॥

किलोलें काम करता है, है वो तैयार खाने को।
मगर आशा की वायु तो, लगाती साथ तुमको है ॥१॥अरे
पयोधर और जङ्घा भी, दिये हैं नारियों को जो।
बने हैं मोह माया से, कवी इनको बताते हैं ॥
मगर सोचो यह क्या हैंगे, ज़रा बुद्धी लगाओ तुम।
विकार हैं मॉस के यह सब, समझ वाजिब यह तुमको है॥५॥अरे०
रखी है आग आगे को, तपाता सूर्य पीछे से।
लगा ठोड़ी को घोंटू में, गुज़ारें रात ऐसे हैं॥
धरी है हाथ में भिक्षा, तले पेड़ों का वासा है।
मगर इस पै भी आशाने, जकड़ रक्खा जो तुमको है॥६॥अरे०॥
फटी टूटी इक गुदड़ी है, ढका इस से बदन सारा।
अलग पुन पाप रस्ते से, मनुज दुनियाँ में चलता है॥
न मैं हूँ और न तुम ही हो, न वे भी हैं यहाँ पर तो।
सिवा ईश्वर नही कोई, तो फिर क्यों शोक तुमको है॥७॥अरे०
गुज़र गई उम्र जब सारी, "हा" फिर कामना क्या है!
उसे तालाब क्या कहना, बिला पानी जो सूखा है॥

हुआ जब नष्ट धन तुम से, फिर परिवार का क्या है।
असल ही तत्व जब जाना, तो क्या संसार तुमको है ॥८॥अरे.॥

गई जब शक्ति तेरी है, कमाई धन की ना मुमकिन।
बिना धन के कभी परिवार, नहीं कुछ काम आता है॥
बुढ़ापा जब है आजाता, नहीं लेवे खबर कोई।
मगर इस पर भी हा! आशा! प्रीति तेरी ही मुझको है॥६॥अरे.॥

किसी ने तो जटा रक्खीं, किसी ने बाल मुँडवाये।
किसीने रंग बरंग कपड़े, किये धारण बदन पर हैं॥
बनाये भेष हर रंग के, यह आपने पेट भरने को।
नहीं सूझे उसे कुछ भी, प्रिय संसार उसको है॥१०॥अरे.॥

पढ़ी गीता अगर तुमने, किये गायन हज़ारों नाम।
और धाया, लक्ष्मीपति को, बिना कुछ प्रेम भक्ती के॥
नहीं सत्सङ्ग भक्तों से, किया है मन लगा कर के।
दिया नहीं दान तुमने कुछ, नहीं यह ज्ञान तुमको है॥११॥अरे.॥
पढ़ी गीता को पूरी भी, नहीं समझा लिखा क्या है?
पिया गङ्गा का जल तुमने, बिना भक्ती के मालिक की॥

नहीं चर्चा मुरारी की, भुलाया नाम गोविन्द का।
लुभाया मनको दुनियाँ में, नहीं विज्ञान तुमको है ॥१२॥अरे.॥

जन्मना मरना दुनियाँ में, गर्भ में मात के आना।
हमेशा नरक के अन्दर, पड़े रहने में तुम खुश हो ॥
यह इस संसार सागर से, उतरना पार मुश्किल है।
कृपा करके करो रक्षा, लगाना पार हमको है ॥१३॥अरे.॥

बता तू कौन और मैं कौन, कहाँ से हम यहाँ आये।
बता माता पिता है कौन, असत् सब यह बताया है ॥
करो तुम त्याग इन सब का, स्वप्न की यह अवस्था है।
विचारो यह तो के.डी.सिंह, भजन से मोक्ष तुमको है ॥१४॥अरे.

यह शिक्षा मेरी दिल से है, कुटुम्बी तुम समझ लेना।
इसे तुम याद कर रखना, इसी पर ग़ौर कर लेना ॥१॥

समय देहान्त मेरा हो, अगर ग़फ़लत मुझे होवे ।
मुझे तुम ज्ञान बतलाना, मुझे तुम यह जता देना ॥ २ ॥

कि दुनियां यह तो मिथ्या है, सभी रिश्ते तो झूठे हैं ।
प्रेम इन में नहीं वाजिब, वृथा इनको बता देना ॥ ३ ॥

अनादि जीव है भाई, नहीं यह नाश होता है ।
नहीं संकट इसे कुछ है, अमर इसको बता देना ॥ ४ ॥

गले चोले को तज कर के, नया धारण ये करता है ।
सुनाना "ओ३म्" एकान्तर, ध्यान उस में लगा देना ॥ ५ ॥

नहीं करना ज़रा भी शोक, ज़रा धीरज को धर कर के ।
अमन से मैं चला जाऊँ, मेरा मन्दिर जला देना ॥ ६ ॥

हुआ पैदा यहाँ पर जो, उसे जाना तो एक दिन है ।
परेशाँ फिर न होना तुम, वियोग मेरा भुला देना ॥ ७ ॥

प्रीति हो गर भला मुझ से, दिलाना ज्ञान चलते वक्त ।
लिखी शिक्षा जो मैंने है, उसी माफ़िक़ चिता देना ॥ ८ ॥

अगर ग़लती हुई इस में, मेरे इस ज्ञान को टाला ।
दुखी अत्यन्त मैं हूँगा, मुझे सह दुख [illegible] देना ॥ ९ ॥

नहीं कहना मुझे कुछ और, नहीं कुछ और सुनना है।
मुझे तो ध्यान ईश्वर है, मेरा फन्दा कटा देना ॥ १० ॥

समय चलने का जब आवे, रहो हुशियार सिंह के, डी. ।
ज़ुबाँ पर नाम ईश्वर रख, यहाँ से कूच कर देना ॥ ११ ॥

ॐ हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्याऽपिहितं मुखम् ।
तत्त्वं पूषन्न पावृणु सत्य धर्माय दृष्टये ॥

॥ य. अ. ४० मं. १५ ॥

सोने के ढक्कन से सत्य का मुँह ढका हुआ है । है ईश्वर परमात्मा उसको सत्य धर्म के लिये यानी ज्ञान के लिये खोल दीजिये । अर्थात् धनादि के लोभ से मनुष्य सत्य धर्म का नाश कर देता है परमात्मा ही जब सत्य धर्म का हृदय में प्रकाश करता है । तब वह लोभ का ढक्कन टूटता है । और फिर लोभ उसको सत्य धर्म से नहीं टला सकता ।

नज़्म में

सच्चाई का जो मुख है जी, ढ़का सोने के ढक्कन से ।
उसे सत् धर्म के कारण, ज़रा खोलो मेरे स्वामी ॥
यह धन के लोभ से इन्सां, करें सत् धर्म का है नाश ।
मनुष्य हृदय के अन्दर जब, प्रकाशित सत्य है स्वामी ॥

तभी तो लोभ का ढक्कन, वह टूटे है मेरे ईश्वर ।
टला सकता नहीं कोई, नहीं फिर लोभ कुछ स्वामी ॥

प्रेम

नहीं तुझ सा हितैषि है, नहिं कोई दीन मुझ से है ।
बराबर प्रेम सब से है ॥१॥
लगे प्रिय दाम लोभी को, या कामी पुरुष को स्त्री ।
उसी प्रकार तू मुझको, लगे प्यारा तू दिल से है ॥२॥
तो मैं हक् क्यों नहीं रखता, तेरी कृपा का अय प्यारे ।
मेरे दुःखों को हर लेगा, मुझे निश्चय यह मन से है ॥३॥
तू उस ब्रह्मांड सारे में, प्रकाश अपना बताता है ।
तेरी ज्योति को मैं देखूँ, दरस दो आरज़ू ये है ॥४॥
यह के. डी. सिंह चाहे है, चरण कमलों मे पड़कर के ।
मेरे अवगुण क्षमा करना, तमन्ना यह तो दिल से है ॥५॥

जहां होती कथायें हों, जहां भक्ती की शिक्षा हो ।
जहां गुण गान तेरे हों, बसो तुम राम उस जा पर ॥१॥

जहां ऋषियों के जप यज्ञ हों, जहां सन्तों की संगत हो ।
जहां सत्संग होते हों, बसो तुम राम उस जा पर ॥२॥

जहां मर्याद पर चलते, जहां भगवत भजन करते ।
जहां सत्पुरुष रहते हों, बसो तुम राम उस जा पर ॥३॥

जहां सन्ध्या हवन करते जहां करमों को हैं करते ।
जहां सत्मार्ग चलते हों, बसो तुम राम उस जा पर ॥४॥

जहां अभ्यास होते हों, जहां ईश्वर को भजते हों ।
जहां ज्ञानी निवासी हों, बसो तुम राम उस जा पर ॥५॥

जहां दम दान होते हों, जहां ऋषियों का हो सन्मान ।
जहां ईश्वर से डरते हों, बसो तुम राम उस जा पर ॥६॥

अगर मालिक से मिलना हो, हृदय अपने हि में देखो ।
लगावे ध्यान के० डी० सिंह, बसो तुम राम उस जा पर ॥७॥

शुकर भगवान तेरा है, दयालू नाम तेरा है ।
तु ही करता जगत का है, चिदानन्द स्वामी मेरा है ॥१॥
तेरी रहमत से हम ज़िन्दा, तु ही दाता कहाता है ।
तेरी ही ज्ञान जोती से, हटे हिय का अंधेरा है ॥२॥
तु ही कर्मों का फल दाता, तु ही मुन्सिफ़ हमारा है ।
निगाहे रहम तेरी हो, मुझे पापों ने घेरा है ॥३॥
तु ही राजा है दुनियां का, तु ही मालिक है रचना का ।
तु ही स्वामी हमारा है, तु ही जग का उजेरा है ॥४॥
तुझी से ज्ञान मिलता है, तुझी से मोक्ष मिलती है ।
करो भगवान अब मेरे, हृदय मंदिर में डेरा है ॥ ५ ॥
हुई सब कामना पूरण, नहीं अब कुछ रही बाक़ी ।
नाथ ये दास के. डी. सिंह, तेरे चरणों का चेरा है ॥६॥

शरण जगदीश के आया, खबर लो नाथ तुम मेरी ।
मुझे माया नें भरमाया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥१॥

मैं दुखिया द्वार पर आया, चरणकमलों के दर्शन को ।
दरस दो मुझको जग राया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥२॥

मेरा बेड़ा समुन्दर में, पड़ा मझधार के अन्दर ।
नहीं पतवार कोई पाया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥३॥

मुझे आशा तुम्हारी है, तुम्हारे गुण मैं गाता हूं ।
जगत को खूब अज़माया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥४॥

नहीं बाकी है कुछ करना, मुझे संसार के अन्दर ।
मुझे अब तक न अपनाया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥५॥

मेरी रक्षा करो भगवन्, भक्त प्रह्लाद की जैसे ।
सिंह से शेर बन आया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥६॥

प्रभो ये दास के. डी. सिंह, शरण लो आप की स्वामी ।
करो करकमलों की साया, खबर लो नाथ तुम मेरी ॥७॥

शरण आया हूं मैं तेरे, दया करना मेरे ऊपर ।
द्वन्द हर लीजिये मेरे, कृपा करना मेरे ऊपर ॥१॥

जकड़ रक्खा है पापों ने, पकड़ रक्खा है तापों ने।

अनाथों की तरह घेरे, दया करना मेरे ऊपर ॥२॥

नज़र फैला के देखा है, सिवा तेरे नहीं कोई।

तरन तारन को है हेरे, दया करना मेरे ऊपर ॥३॥

कोई तुझसा नहीं जग में, तुहीं माता पिता सब का।

तु ही मालिक है हम चेरे, दया करना मेरे ऊपर ॥४॥

दया कर भक्ति अपनी दे, शरण में मुझको ले अपने।

बाँह गहले मुझे नेरे, दया करना मेरे ऊपर ॥५॥

जो तुझको याद करता है, तू उसकी पीड़ हरता है।

मिटे आवागमन फेरे, दया करना मेरे ऊपर ॥६॥

तिरेगा तब ही के. डी. सिंह, दया अपनी जो कर देगा।

हटे माया के अन्धेरे, दया करना मेरे ऊपर ॥७॥

श्री वृन्दावन विहारी से, हमारी आरज़ू यह है ।
मिलें मथुरा से आकर के, हमारी जुस्तजू यह है ॥१॥

गये हैं जब से वो तजकर, निराशी कर दिया हमको ।
दुखी हैं हम बिना दर्शन, दुखारी कर दिया हमको ॥२॥

नहीं बन्सी की धुन सुनते, नहीं गायन सुना हमने ।
नहीं पाया पता उनका, नहीं दर्शन किया हमने ॥३॥

ज़रा ऊधो कहो जाकर, सँदेशा दे दिया हमने ।
बिसारा किन कुसूरों पर, किया अपराध क्या हमने ॥४॥

तड़पते हैं महावन मे, लगे फीका हमें जीवन ।
निगाह है उनके चरणों में, नहीं प्यारा हमें जीवन ॥५॥

दर्श हमको अगर दे दें, सुफल आशा अगर कर दें ।
नहीं मुश्किल है कुछ उनको, देखले वो नज़र कर दें ॥६॥
दर्श बिन तुम भी के. डी. सिंह, पड़े दुनियां के अन्दर हो ।
बिना भक्ती के मुश्किल है, तलाशो मन के मन्दर को ॥७॥

कहां ढूँढूँ किधर पाऊँ, मेरी है दौड़ तेरे तक ।
बड़ी चिन्ता कहाँ जाऊँ, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥१॥
न मन्दिर में तूही मिलता, न मसजिद में पता चलता ।
न गिरजा में तुझे लखता, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥२॥
अगर खोजूँ वियाबां में, ढंडोरा करके शहरां में ।
कहीं ढूँढूँ हूं हे रामे, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥३॥
न गंगा में न जमुना में, न काशी में अयोध्या में ।
न पाया तुझको काबे में, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥४॥
भटकता मैं रहा यहां पर, पहाड़ों पर लगा चक्कर ।
विना तुझे मिले कहां पर, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥५॥
नहीं मुनकिर हूँ हस्ती का, नहीं क़ायल हूँ नेस्ती का ।
हूं ख्वाहां तेरी मस्ती का, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥६॥
जो देखा सोचकर मन में, तो पाया तेरे को दिल में ।
सर्व व्यापी तू हर गुलमें, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥७॥
तू दर्से शुद्ध हो हिरदा, उठा मा नैन का परदा ।
क. डी. सिंह देखले जलवा, मेरी है दौड़ तेरे तक ॥८॥

नहीं बिल्कुल हमें फ़ुरसत, जो द्वन्दों में लगे जावें ।
नहीं कुछ है हमें फ़रहत, जो फन्दों में फँसे जावें ॥१॥
तमन्ना दिल से करते हैं, परम ईश्वर को ध्याते हैं ।
हरीहर को मना करके, परम पद को चले जावें ॥२॥
सफ़ाई मन की करके हम, नज़र ईश्वर पै रख कर हम ।
करें गुणवाद उसके हम, भजन उसके कर जावें ॥३॥
उसी की याद जब होगी, तो पूरण भक्ति तब होगी ।
जभी तो प्रेम पैदा हो, सभी योगी बने जाव ॥४॥
श्री भगवन् करो दृष्टि, करो स्वामी दया दृष्टि ।
क़दम आगे बढ़े जावें, तेरे कोही भजे जावें ॥५॥
सिवा मालिक के क. डी. सिंह, नहीं हामी कोई अपना ।
करें हम प्रार्थना उससे, कठिन सागर तिरे जावें ॥६॥

जगत करता पतित पावन, दयालु दीन बन्धू हो ।
विपत हरता जगत स्वामिन, दयालु दीन बन्धू हो ॥१॥

भक्त वत्सल दया बन्धू, जगत पालक जगत दाता ।
जगत ज्योती से है रोशन, कृपालू दीन बन्धू हो ॥२॥
जगत तारक जगत रक्षक, जगत मालिक जगत त्राता ।
जगत स्वामी जगत पालन हो, करता दीन बन्धू हो ॥३॥
परम ईश्वर परम ज्ञानी, परम दाता परम ध्यानी ।
सच्चिदानन्द आनन्द घन, हरी हर दीन बन्धू हो ॥४॥
यह विनती सिंह के. डी. की. जगा दो नाथ हम सब को ।
करें पूजा तेरी भगवन्, जगत पति दीन बन्धू हो ॥५॥

चरण छूने को आया हूँ तेरे दर पर ।
शरण अपने में रख लेना तेरे दर पर ॥१॥
तेरी सेवा करे जाऊँ मैं तन मन से ।
चरण अपने में रख लेना तेरे दर पर ॥२॥
लिया है आसरा तेरा मेरे ईश्वर ।
मुझे भक्ती में रख लेना तेरे दर पर ॥३॥

लगादे ध्यान मेरा अपने में स्वामी ।

तेरी रहमत में रख लेना तेरे दर पर ॥४॥

तेरा ही आसरा है सिंह के. डी. को ।

चरण कमलों में रख लेना तेरे दर पर ॥५॥

गुरज निज दास की स्वामिन्

निकालोग तो क्या होगा ।

चरणकमलों में अपने गर

लगा लोगे तो क्या होगा ॥ १ ॥

म इस संसार सागर में,

पड़ा हूँ बीच धारा में ।

पकड़ कर हाथ मेरा भी,

उठा लोगे तो क्या होगा ॥ २ ॥

न खेवट है न नौका है,

जिसे पकड़ूं मैं सागर में ।

न है माता पिता कोई,

शरण लोगे तो क्या होगा ॥ ३ ॥

सिवा तेरे नहीं ईश्वर,

सहायक है कोई मेरा ।

मुझे इस वक्त विपदा से,

बचा लोगे तो क्या होगा ॥ ४ ॥

अनाथों पर कृपा करके,

बचाये दीन जन तुमने ।

मेरे हित देर क्यों करदी,

उभारोगे तो क्या होगा ॥ ५ ॥

न तुमसा है पतित पावन,

न मुझसा दीन जन जग में ।

प्रभु करके कृपा यह टेर,

सुन लोगे तो क्या होगा ॥ ६ ॥

लिया है आसरा तेरा,

छुड़ा कर मोह दुनियाँ से ।

विनय करता है के. डी. सिंह,

निभालोगे तो क्या होगा ॥ ७ ॥

कृपा करदो मेरे ऊपर, तुम्हीं तो सुःख दायक हो ।
शरण आया तुम्हारे में, तुम्हीं तो दुःख निवारक हो ॥१॥
चला था मैं सफ़र करने, किया संग पाँच चोरों ने ।
अधर लटका दिया मुझको, तुम्हीं संकट निवारक हो॥२॥
अगर देखूं मैं ऊपर को, उमर डोरी को काटे हैं ।
लगे चूहे वहाँ दिन रात, तुम ही मेरे सहायक हो ॥३॥
अगर नीचे को मैं देखूँ, पड़ा है काल मुँह खोले ।
वह है तैयार डसने को, तुम्हीं अब मेरे रक्षक हो ॥४॥
नज़र करता हूँ आगे को, चला आता है ज़ोरों से ।
बड़ा इक मस्त हाथी है, तुम्हीं जीवन के दायक हो ॥५॥
है बारह मास का पुतला, ऋतू जिस में गुज़रती है ।
मेरी आयू घटाता है, तुम्हीं जीवन सुधारक हो ॥६॥
मगर गिरता है रस ऐसा, जिसे चख करके भूला मैं ।
नहीं परवाह दुःखों की, तुम्हीं अज्ञान नाशक हो ॥७॥
बचालो नाथ के डी. सिंह, अभय करदो मुझे भगवन् ।
हरो संकट विपद स्वामी, तुम्हीं भक्तों के पालक हो ॥८॥

तेरा ही नाम रटता हूँ, तेरा ही ध्यान धरता हूँ ।
तेरा है आसरा मुझको, तेरी ही याद करता हूँ ॥१॥
तेरी ही ज्योति रोशन है, तुझे दिन रात जपता हूँ ।
तू ही पैदा कुनन्दा है, तेरे चरणों में गिरता हूँ ॥२॥
किया धारण जगत को है, शरण तेरे मैं पड़ता हूँ ।
दिये चन्दा सुरज तारे, दरस उनका मैं करता हूँ ॥३॥
पदारथ खाने पीने के, मैं नित उनको बरतता हूँ ।
कहाँ तक मैं करूँ गुण गान, अल्प बुद्धी मैं रखता हूँ ॥४॥
दयालू पन पै अय भगवन्, नज़र अपनी मैं रखता हूँ ।
खड़ा आसी है के. डी. सिंह, तेरे दर पर मैं पड़ता हूँ ॥५॥

तेरी वंसी की धुन सुन कर, मेरा मन शुद्ध होता है ।
नज़र सृष्टी पै रख रख कर, तेरा विश्वास होता है ॥१॥
घड़ी अद्भुत तेरी रचना, तेरी माया निराली है ।
तेरे ही शब्द सुन सुन कर, मगन मन मेरा होता है ॥२॥

तेरा प्रकाश दुनियां में, नज़र आता है सब शय में ।
तेरी धुन दिल में बस बस कर, मेरा मन शान्त होता है ॥३॥
यह दुनियां क्या तमाशा है, कोई आता है जाता है ।
तेरे गुण गान गा गा कर, मुझे आनन्द होता है ॥४॥
कोई मरता है जीता है, कोई रोता है, हँसता है ।
हर एक दुनियां में रह रह कर, पसारे पैर सोता है ॥५॥
लगा तन मन को के. डी. सिंह, करो भगवत भजन हर दम ।
बिताता आयु सो सो कर, वह सब कुछ अपना खोता है ॥६॥

करतार सही, भरतार सही,
मेरी बिन्ती तो सुनलो हरी जु हरी ।
रघुबीर सही, बलबीर सही,
मुझे ज्ञान तो देदो ज़री जु ज़री ॥१॥
जगदीश सही, परमेश सही,
मेरी मंज़िल तो है गी कड़ी जु कड़ी ।
रिथपाल सही, कृपाल सही,

मुझे निर्भय तो कर दो श्री जु श्री ॥२॥

ऋषि केश सही, त्रिगजेश सही,

मुझे शान्ति तो देदो, घड़ी जु घड़ी ।

रणधीर सही, रणवीर सही,

मेरा कष्ट निवारो हरी जु हरी ॥३॥

आकार सही निराकार सही,

मुझे दर्श दिखादो श्री जु श्री ।

दातार सही मेरे ईश सही,

सिंह के. डी. को तारो हरी जु हरी ॥४॥

जब होगी प्रेम भक्ती मन में पैदा ।

रंगेगें मन को जब हम होके शैदा ॥१॥

तो प्रेमी बन के लेंगे नाम ईश्वर ।

हर एक सूरत में लेंगे नाम ईश्वर ॥२॥

नहीं कुछ भेद मालिक का है इस में ।

किसी विध उसको भजलें दिल ही दिल में ॥३॥

बना "रामा" के "मारा" भज ऋषि ने ।

करी हासिल ब्रह्म पदवी मुनी ने ॥४॥

वह अनपढ़ थे मगर अंतश सुधारा ।

लगा धुन फकृत एक "मारा" "मारा" ॥५॥

फिर के. डी. सिंह तू क्यों सोच करता ।

भक्त वत्सल कष्ट सब का वो हरता ॥६॥

राम भये लछमण भी भये,

पृथ्वी का भार उतारा ही था ॥१॥

कृष्ण भये बलभद्र भये,

गोपी ग्वालों को नाच नचाया ही था ॥२॥

रघुवंश भये रघुनाथ भये,

सन्तों को दर्श दिखाया ही था ॥३॥

गिरधारी भये जलधारी भये,

ब्रज वासियों को तो बचाया ही था ॥४॥

रण छोर भये दधिचोर भये,
अर्जुन को तो ज्ञान सिखाया ही था ॥५॥
दातार भये करतार भये,
सिंह के. डी. को पार लगाना ही था ॥६॥

मैं तो ज्ञानी नहीं अज्ञानी सही,
मुझे पार लगाने की याद रहे ।
मैं तो योगी नहीं भोगी ही सही,
मुझे चरणों में लेने की याद रहे ॥१॥
मेरे ईश बतादे ज़रा तो सही,
तुझे छोड़ के किसकी मैं याद करूँ ।
मैं तो धीर नहीं चंचल ही सही,
मुझे भक्त बनाने की याद रहे ॥२॥
तेरे दर के सिवा मैं जाऊँ कहाँ,
कोई वस्तु नहीं बिना तेरे रहाँ ।

मेरे कर्म बुरे या भले ही सही,

मुझे शान्ति दिलाने की याद रहे ॥३॥

मैं तो पुत्र तेरा हि तो हूँ भगवन् !

मेरे मात पिता भी तुम्हीं तो हो ।

मैं तो दाना नहीं नादान सही,

मुझे गोद बिठाने की याद रहे ॥४॥

मेरे मन की वृती को बदल दे ज़रा,

हरि नामाऽमृत तो पिलादे ज़रा ।

मुझे सुःख नहीं तो दुःख ही सही,

सिंह के. डी. की विनती ये याद रहे ॥५॥

तेरी धुन का मतवाला मैं बन गया हूँ ।

फ़िसाना तेरे का ही शैदा हुआ हूँ ॥१॥

अजब है तमाशा यह दुनियां का खेल अब ।

निगाह करके रचना पर हैरां हुआ हूँ ॥२॥

अजब बाग़ सरसब्ज़ बोया है तू ने ।
इसे देख कर मैं परेशाँ हुआ हूँ ॥३॥
हुई मेरी हालत है नाज़ुक तो ऐसी ।
समझकर ही जिसको हिरासाँ हुआ हूँ ॥४॥
नहीं सूझता है नहीं दीखता है ।
तेरी ज्योति रोशन पै कुरबाँ हुआ हूँ ॥५॥
भला सिंह के. डी. को कहना ही क्या है ?
तेरे चरण कमलों में भौंरा हुआ हूँ ॥६॥

भज जान की वल्लभ असुरारी,
भज रघुनन्दन सर्वाधारी ।
रहते हैं ध्यान में भक्तों के,
सन्तों के हैं हितकारी ॥१॥
ऐसे हैं यह श्याम मनोहर,
जग के हैं वो रख वारी ।
भक्तों से है प्रेम इन्हों का,
है दया के पूरण भण्डारी ॥२॥

सब के मन में बासा है उनका,

सब के हैं रक्षा कारी।

जो जग को नाच नचाते हैं,

भक्तों के हैं मायाधारी ॥३॥

आवागमन से पार करैया,

स्वामी हम सब के भगवन्‌।

पतितों को हैं पावन करते,

हैं के. डी. सिंह के सुखकारी ॥४॥

मुझे प्रेम भक्ति के रस्ते, लगाजा हरीहर!

मुझे ज्ञान मुक्ति के मारग, चलाजा हरीहर ॥

तेरी शान शौकत पै, नाज़ां हुआ हूँ,

मेरे बाग़ दिल को तू रोशन, कराजा हरी हर ॥

ज़रा इसको देखो ये, सूखा हुआ है,

तेरी बार उल्फ़त से इसको, रंगाजा हरी हर ॥

किया तुमने पैदा था, अपनी खुशी से,

मुझे ख्वाबे गफ़लत से फिर, तू जगाजा हरी हर ॥

मैं कमज़ोर हूँ हद दरजे यहां पर,
रफ़ा कर उसे जाम अमृत, पिलाजा हरी हर ॥
हुआ सिंह के. डी. जो आशिक तेरे पर,
करामत व रहमत में अपने, रखाजा हरी हर ।

तेरी शान शोकत बतादे ज़रा तो,
तेरा नूर रोशन दिखा दे ज़रा तो ॥
नहीं पास और दूर है मुझ से तू,
स्वरूप अपना मुझको दिखादे ज़रा तो ॥
रमा है व सब जीवों में यकसाँ,
तेरा दर्श मुझको करादे ज़रा तो ॥
तू मुझ में भी मौजूद है सर्व व्यापी,
मुझे ज्ञान शक्ति दिलादे ज़रा तो ॥
नहीं बारे रहमत से महरूम कोई,
मेरा ध्यान तुझ में जमा दे ज़रा तो ॥
गुनाह गठरी लेकर खड़ा के. डी. सिंह है,
मेरा शीश चरणों रखादे ज़रा तो ॥

भक्ति

ॐ पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूहरश्मीन् समूह । तेजोयत्ते रूपङ्कल्याणं यमन्तत्ते पश्यामि योऽसावसौपुरुषः सोऽहमस्मि ॥

यः अ० ४० मं० १६

भावार्थ—

पुष्टि कारक, एक ही सब में व्यापक सब को नियम में रखने वाले सब के प्रकाशक, हृदयेश्वर अपनी तेजोमय किरणों के समूह को फैला कर जो तेरा तेजोमय मङ्गल रूप है वह तेरा रूप देखता हूँ । जो यह पुरुष है वह मैं हुं । अर्थात हे सर्वान्तर्यामिन् ! प्रकाशमय ! हृदयेश्वर ! कृपा कर अपनी विज्ञान मय फैली हुई किरणों को इकट्ठा कर मेरे हृदय में फैलाइये और मुझको इस योग्य बनाइये कि मैं आप के तेजोमय रूप के दर्शन कर सकूँ और यह कहने का अधिकारी बनूँ कि मैं आप के उस मंगलमय रूप को सर्वत्र देखता हूँ और जो यह पुरुष है वह मैं हूँ । (ऐसा ब्रह्मज्ञानी पुरुष कह सकता है) ।

नज़्म में

तू ही पुष्टिकारक तू ही सब में व्यापक।

जगत का प्रकाशक तू ही सब का रक्षक॥

तू हृदय का ईश्वर रखे नियम में है।

सभी तेरे बन्दे तुझी से हैं डरते॥

तेरी तेज किरणों इकट्ठी को फैला।

मेरे दिल के अन्दर तू करदे उजेला॥

बनादे मुझे योग्य दर्शन करूँ मैं।

तेरे तेजमय रूप हृदय धरूँ मैं॥

कहूँ फिर यह हरदम जो अधिकार है हर समय।

कि देखूँ मैं मौजूद उस रूप को हर जगह॥

जो पुरुष है रोशन, सिंह के. डी. बनगा।

सिवा ब्रह्मज्ञानी नहीं कह सकेगा॥

गुण ईश्वर के हम रोज़ गाया करेंगे।

हरीहर को मन में मनाया करेंगे॥१॥

कुकर्मों को अपने मिटाया करेंगे ।

कुशल दूसरों की मनाया करेंगे ॥२॥

अधर्मों को दिल से बचाया करेंगे ।

जगत नाथ से दिल लगाया करेंगे ॥३॥

अन्तःकरण को सुधारा करेंगे ।

वेदान्त डंका बजाया करेंगे ॥४॥

सुकर्मों में वृत्ती लगाया करेंगे ।

ख्याल मन में, न लाया करेंगे ॥५॥

भगत बन के ईश्वर को ध्याया करेंगे ।

मन अपना उसी में जमाया करेंगे ॥६॥

यदि ज्ञान दीपक जलाया करेंगे ।

तो मन का अँधेरा मिटाया करेंगे ॥७॥

जो हर छिन में भगवत् मनाया करेंगे ।

के. डी. सिंह गुण उन का गाया करेंगे ॥८॥

हमें आज्ञा दी ईश्वर ने, थे जब जननी के उदरों में ।
करो श्रद्धा से भक्ती तुम, मिज़ेरह मेरे बन्दों में ॥१॥
मिटा कर्मों के बन्धन को, हरे सब रागद्वेषों को ।
छुटे आवागमन फिर तो दुखी मन हो न द्वन्दों में ॥२॥
मगर हमने यहां आकर, बिगाड़ा अपने जीवन को ।
भुलाया नाम भगवत का, लगे दुनियाँ के धन्धों में ॥३॥
फँसे इक बार इन में जो, पड़ी मुश्किल सुलझने में ।
सिवा अभ्यास साधन के, रहें जकड़े वह फन्दों में ॥४॥
जो ख्वाहिश हो निकलने की, करो तुम भक्ति ईश्वर की ।
दया तुम पर वह कर देंगे, रखो सिर उनके चरणों में ॥५॥
दया भन्डार प्रभु खोलो, दिलादो मोक्ष की भिक्षा ।
सुनो यह अर्ज़ के. डी. सिंह, मुझे लो अपने शरणों में ॥६॥

मैं हूँ आश्चर्यवत भगवन्! तुम्हें क्यों कर मनाऊँ मैं !
न कुछ भी पास मेरे है, जिसे चरणो में लाऊँ मैं ॥१॥
न धन दौलत से तुम खुश हो, कि तुम भंडार उनके हो ।
न इच्छा तुमको भूषण की, तो फिर क्या भेंट लाऊँ मैं ॥२॥
न भोजन के हो तुम भूखे, जगत वासा तुम्हारा है ।
न है कोई मकाँ तेरा, कहां फिर तुझको पाऊँ मैं ॥३॥
जगत ज्योती के सूरज हो, जगत जीवों के जनता हो ।
जगत का चाँदना तुम हो, कहां ज्योती लखाउं मैं ॥४॥
हर एक में बस रहे भगवन् ! न खाली तुमसे कोई भी ।
नवाकर शीश के. डी. सिंह, तेरे चरणों लगाऊँ मैं ॥५॥

एक आया है मतवाला चलकर,
तेरे दर्शन करने को ।
दुनियां ढूँढी जंगल छाना,
तेरे दर्शन करने को ॥१॥

गंगा न्हाया जमुना न्हाया,
गया मैं मसजिद मन्दिर में।
गिरजा ढूँढी काशी ढूँढी,
फिरा पहाड़ों कन्दर में ॥२॥

सुनी कथायें पढ़ी किताबें,
संगत कर कर सन्तों में।
घर में ढूंढा बाहर देखा,
हर मज़हब और पंथों में ॥३॥

लज्जित होकर आ बैठा जब,
खोजा हृदय के मन्दिर में।
प्रकाश को तेरे पाया जब,
अपने ही प्रति अन्तर में ॥४॥

अजब है लीला तेरी ईश्वर,
अजब है दर्शन तेरे में।
तुझको पाकर मग्न हुवा मैं,
"मैं" तू रही न मेरे में ॥५॥

धरो ध्यान तुम के. डी. सिंह,
अब अपना उसके चरणों में ।
रहो मगन सब छोड़ के तुम भी,
ईश्वर के अब शरणों में ।६॥

जगत के करता तुम्हीं तो हो, जगत के दाता तुम्हीं तो हो ।
जगत के स्वामी तुम्हीं तो हो, जगत के त्राता तुम्हीं तो हो ॥
तुम्हीं मौजूद हो हर जा, तुम्हीं ख़ालिक़ हो दुनियां के ।
तुम्हीं हाज़िर व नाज़िर हो, दीन के भ्राता तुम्हीं तो हो ॥
बिना कानों के सुनते हो, बिना वाणी के वक्ता हो ।
बिना आंखों के देखो हो, जगत विधाता तुम्हीं तो हो ॥
बिना पैरों के चलते हो, कर्म करते भी अकरम हो ।
बिना जिभ्या के भोगी हो, बिन मुख खाता तुम्हीं तो हो ॥
बिना नस नाड़ी बन्धन के, जगत धारण किया तुमने ।
बिना नथुनों के सूंगो हो, जग निरमाता तुम्हीं तो हो ॥
बिना तनस्पर्श करते हो, लिखूँ महिमा कहां तक मैं ।

सभी करनी अलोकिक है, जगन्नियंता तुम्ही तो हो ॥
तुम्हारी है अजब माया, नचाती नाच जीवों को।
यही है बन्ध का कारण, जगत नचाता तुम्ही तो हो ॥
सभी से प्रेम के. डी. सिंह, नहीं कुछ द्वेष है हमको।
हमारी नौका क्यों डूबे भव में, नाव चलाता तुम्ही तो हो ॥

अजब यह श्यामसुन्दर हैं, अजब माधव मनोहर हैं।
अजब यह उन की महिमा है, वो ईश्वर दीनदुखहर है ॥१॥
बहाना गेंद का कर के, पड़े वह कूद जमुना में।
वहां काली को नाथा था, अजब कर नृत्य फन पर हैं ॥२॥
बँधा ऊखल से अपने को, उबारा यमला अर्जुन को।
उठाया नख पै गोवर्धन, अजब ये वीर गिरधर हैं ॥३॥
करी थी ब्रज में लीलायें, लुभाये गोपी ग्वालों को।
चीर हर गोपिकाओं के, दिये उपदेश नटवर हैं ॥४॥
संहारा राक्षसों को था, बचाये ब्रज के बासिन को।
जिलाया गुरु के पुत्रों को, अजब दातार यदुबर हैं ॥५॥

विदुर घर साग खाया था, सुयोधन के तजे व्यञ्जन ।
करा कुब्जा का सीधा कद, अजब ये भक्त परवर हैं ॥६॥
ध्रुवजी को दरश देकर, उजाला ज्ञान बख्शा था ।
हरा प्रह्लाद का संकट, हरी नृसिंह बन कर हैं ॥७॥
हमारी भी विनय सुनना, हमारे ईश गिरधारी ।
जगादो ज्योति अपनी प्रभु, अंधेरे हृदयमंदिर हैं ॥८॥
प्रेम से भज तू के. डी. सिंह, भक्तवत्सल दयानिधि को ।
करेगा पार वो नौका, अथाह संसार सागर है ॥९॥

———

मुझे दो शान्ति ईश्वर, तुम्हीं मेरे हो परमेश्वर ।
मेरा उद्धार करने को, बसो हृदये में हे ईश्वर ॥१॥
भटकता हूँ मैं दुनियां में, हुआ चंचल ये मेरा मन ।
करूँ शीतल इसे क्यों कर, लगे भक्ती में हे भगवन्! ॥२॥
नहीं है शान्ति जब तक, नहीं तृप्ती है मेरे मन ।
न है भक्ती न पूजा है, नहीं प्रीती है मेरे मन ॥३॥

हैं जब तक मोह मद साथी, करेंगे लोभ से प्रीती।
जभी तक पाप की गठरी, मेरे सिर पर न हो रीती ॥४॥
उतारूँ बोझ इस का मैं, करूँ हलका हो हित अपना।
लगा सोहंग ही की धुन, बनाऊँ शान्त चित अपना ॥५॥
नहीं कोई मुझे दुख हो, नहीं ख्वाहिश मुझे कुछ हो।
मिले जब शान्ति पूरण, तो यह संसार सब तुच्छ हो ॥६॥
गिरो चरणों पै के. डी. सिंह, उसी ईश्वर का प्रेमी बन।
नहीं कुछ रख के आशा तू, करेजा याद हर एक छिन ॥७॥

दीनानाथ हमको तुम्हारा सहारा।
परमेश्वर तुमसे हमारा गुज़ारा ॥१॥ दीनानाथ० ॥
यह वही धन्धा तुम्हारा निराला।
जगत यह सारा तुम्हारा फ़िसाना ॥२॥ दीनानाथ० ॥
प्रभू भवसिन्धू से हमको तिराना।
बिना भक्ति कहाँ पर हमारा ठिकाना ॥४॥ दीनानाथ० ॥

जगन्नाथ से दिल अपना लगाना ।

हरीहर हरीहर जपना जपाना ।।४।। दीनानाथ० ॥

के. डी. सिंह को सुमारग लगाना ।

नाथ मोहनिद्रा से मुझको जगाना ॥५॥दीनानाथ० ॥

अब मेरी ही बेर क्यों देर करी,

कई भक्तों के काज बनाये हरी ॥

ध्रुव तार प्रहलाद उबार लिया,

गजराज का संकट मेट दिया ॥

आ ग्राह को मारा सुदर्शन से,

तज गरुड़ को दौड़ के आये हरी ॥

ऋषि गोतम नारि अहल्या तरी,

प्रभु के पद की रज शीश धरी ॥

शबरी के चखे प्रभु बेर भखे,

झूंठे बेरों को खाय सिराये हरी ॥

सुनो नाथ अनाथ सनाथ करो,
निज दासों के दुख को शीघ्र हरो ॥
अब के. डी. सिंह की अर्ज यही,
मुझ से दीनों के दिल क्यों दुखाये हरी ॥

मेरी विनती सुनलो श्री कृष्ण मुरारी ।
हरो मेरा संकट हे माधव बिहारी ॥१॥
निकृष्ट बुद्धि मेरी हो रही है ।
इस से ही असन्त हूं में दुखारी ॥२॥
विश्वास मेरा अगर कुछ भी होता ।
शरण तेरी लेता हे कुंज बिहारी ॥३॥
न हो ती परेशानी फिर मुझको कुछ भी ।
तुझे चाहता दिल से ज्यों निर्विकारी ॥४॥
खुशी है नजीने में मरने का ग़म है ।
रहे तेरे चरणों में सुरती हमारी ॥५॥

पुकारा दुखी हो के गज राज ने जब ।
भगे पयादे हि तज खग की सवारी ॥६॥
दिया बापने कष्ट प्रहलाद को जब ।
प्रगट हो के काया असुर की विदारी ॥७॥
सभा में रखी लाज द्रुपद सुता की ।
बसन रूप बनकर बढ़ाई थी सारी ॥८॥
अब तारो न तारो प्रभु के. डी. सिंह को ।
मुझे तो तेरा ही भरोसा है भारी ॥९॥

जगत दाता कहाते हो, जगत कर्ता के गुण गाऊँ ।
जगत धारण किया तुमने, जगत त्राता पे मन लाऊँ ॥१॥
जगत ईश्वर तुम्ही तो हो, भक्त वत्सल तुम्हारा नाम ।
जगत पालन तुम्हीं करते, जगत रक्षक को सर नाऊँ ॥२॥
जगत ईश्वर हरो संकट, जगत पालक हरो विपदा ।
जगत मालिक करो रहमत, किसे रक्षा को अब लाऊं ॥३॥

बनाकर चन्द्र और सूरज, जगत रोशन किया तुमने।
उठाते फायदा इनसे, जगत रचता को मैं ध्याऊँ ॥४॥
दिया भोजन हमैं तुमने, सभी वस्तु मिली तुमसे।
हमी भोगी हैं इन सब के, कृपा से तेरी मैं पाऊँ ॥५॥
करो धन्यवाद के-डी-सिंह, वोही तो प्राण दाता है।
उसीका आसरा मुझको, सिवा उसके कहां जाऊँ ॥६॥

दया सागर तू ही तो है, दया भन्डार तेरा है।
तु ही दाता मेरा ईश्वर, तु ही रज़्ज़ाक़ मेरा है ॥१॥
जहां में दीखता जो कुछ, तु ही करता है इन सब का।
तेरी करनी अलौकिक है, तू ही सब का उजेरा है ॥२॥
मुझे शक्ती नहीं ऐसी, करूँ वर्णन मै गुण तेरे।
अल्प बुद्धि तो मेरी है, जहालत का अंधेरा है ॥३॥
तु ही मौजूद है हर जा, तेरी ज्योति ही रोशन है।
तू ही है दूर से भी दूर, तु नेरे से भी नेरा है ॥४॥

तू कर कृपा मेरे ऊपर, तू रख अब हाथ मस्तक पर ।
अभय कर शरण लो स्वामी, पड़ा चरणों में चेरा है । ५।।
करे अस्तुति के. डी. सिंह, बसो घट में मेरे भगवन् ।
न होवे ग़ैर का मेरे, हृदय मंदिर में डेरा है ।।६।।

मैं हुँ उस ईश का सेवक, मुझे सेवा बता देना ।
मैं करता दान जीवन को, मुझे अपना बना लेना ।।१।।
मेरी बिनती है तुमसे अब, करो इच्छा मेरी पूरण ।
मेरा तन मन ये हाज़िर है, इसे सेवा में ले लेना ।।२।।
नवा कर शीश अपना मैं, चरण सेवा में आया हूँ ।
मिलो जिस मार्ग से जल्दी, सु मारग वो सुझा देना ।।३।।
करूँ श्रद्धा से भक्ति मैं, नहीं मद मोह कुछ भी हो ।
रहूँ चरणों पड़ा तेरे, शरण अपनी रखालेना ।।४।।
मिले शक्ती जो के. डी. सिंह, रहो लवलीन ईश्वर में ।।
सुफल भक्ती मेरी होवे, हे स्वामी तुम को पा लेना ।।५।।

तु ही माता पिता मेरा, तु ही ईश्वर है इस जग का।
तु ही संसार करता है, तु ही परवर है इस जग का ॥१॥

तुझी में बस रहा जग है, तेरा प्रकाश ज़ाहिर है।
तेरी ज्योती से जग रोशन, तु ही दिनकर है इस जग का ॥२॥

ये जड़ चैतन्य तेरे हैं. तेरा बाग़ीचा दुनियाँ है।
तमाशा देखता सब का, तू ही रहबर है इस जग का ॥३॥

तेरी महिमा अलौकिक है, तेरी करनी निराली है।
बसा है सब में तू दाता, तु परमेश्वर है इस जग का ॥४॥

करम अकरम को देखे हैं, रहम अपना तू करता है।
करे रक्षा हमारी तू, ग़रीबपरवर है इस जग का ॥५॥

नहीं शक्ती है के. डी. सिंह, करूँ गुणगान कैसे मैं।
मुझे शक्ती वह भक्ती दे, तू करुणाकर है इस जग का ॥६॥

लूँ हरदम नाम तेरा मैं, मुझे भक्ती का वर दे दे।
मेरी नैया पड़ी मझधार, मुझे भक्ती का वर दे दे ॥१॥
अनाथों पर कृपा करके, लगाये पार सागर के।
सर्व शक्ती तू ही तो है, मुझे शक्ती का वर दे दे ॥२॥
पड़ा आलस्य में दिल से, भुला कर याद मैं तेरी।
छुटादे मुझको द्वन्दों से, मुझे चुस्ती का वर दे दे ॥३॥
मेरे पापों की गिनती क्या, तेरे गुण का ठिकाणा क्या?
कहाँ तक कर सकूँ वर्णन, करूँ विनती का वर दे दे ॥४॥
अगर तारा मुझे तूने, मेरे अवगुण क्षमा करके।
दयालू कौन फिर तुझसा, मुझे सुगति का वर दे दे ॥५॥
भरोसा करके के. डी. सिंह. भजूं तन मन से तेरे को।
शरण चरणों की लूं तेरी, मुझे प्रीती का वर दे दे ॥६॥

करूँ मैं आप की भक्ती, मेरे स्वामी दया करना।
सुधारो मेरे जीवन को, मेरे ऊपर कृपा करना ॥ १ ॥

गुनी करदो मुझे पूरण, खिला कर शान्ति का चूरण ।
दिखा कर ज्ञान का दर्पण, दिखादो दर्श तुम अपना ॥२॥
जमादो ध्यान अपने में, करो कल्याण हम सब का ।
निकालो दुष्टवृत्ति को, मेरे अवगुण को प्रभु हरना ॥३॥
मुझे आशा तुम्हीं से है, करोगे पार बेड़ा तुम ।
मुझे भक्ति दिला करके, सहायक तुम मेरे बनना ॥ ४ ॥
श्रीरघुवर दया करके, दयालुपन दिखा करके ।
मेरी लज्जा रखा करके, मुझे दो चरन का शरना ॥ ५ ॥
झुका मस्तक तू के. डी. सिंह, किया कर बन्दगी उसकी ।
हटाले सब से दिल अपना, जगत है रैन का सपना ॥६॥

हरी हर को दिल से मनाया करें हम ।
अविद्या को मन से हटाया करें हम ॥१॥
खुशी से मिलें बैठें दुनियां के अन्दर ।
मगर ध्यान ईश्वर लगाया करें हम ॥२॥

हर एक जीव में हर जगह देखें ईश्वर ।
निगह अपनी सूक्ष्म बनाया करें हम ॥३॥
खुदी को मिटावें हटावें खुदी भी ।
तो मिथ्या जगत को भी पाया करें हम ॥४॥
मुकर्रिर सिकर्रिर अर्ज़ के. डी. सिंह है ।
प्रभु तेरा ही गुण गान गाया करें हम ॥५॥

श्रीमान् भगवन् के दर्शन करूँ मैं ।
जगन्नाथ स्वामी के चरणन पड़ूँ मैं ॥ १ ॥
मेरे मन को स्वामिन् हरा है विपत ने ।
तुम्हारे सिवा किसका सुमरन करूँ मैं ॥ २ ॥
लगाई है लौ तुमसे मैंने प्रभुजी ।
भजन करके संसार सागर तरूं मैं ॥ ३ ॥
मेरी ओर देखो मुझे शक्ति दे दो ।
तुम्हारे ही खोजों में फिरता फिरूँ मैं ॥ ४ ॥

मुझे ज्ञान पूरण मिले मेरे भगवन् ।
हर एक श्वाँस के साथ सोहंग जँपू मैं ॥ ५ ॥
तेरे शब्द सुनकर रहूँ यों मग्न मैं ।
कि दुनियाँ के वाजों को फिर ना. सुनूँ मैं ॥ ६ ॥
यह मद मोह दुनियाँ सताते बहुत हैं ।
यह चाहे हैं दुनियाँ के बन्धन पडूँ मैं ॥ ७ ॥
मैं हैरान हूँ किस तरह निकलूँ इनसे ।
हेयकर के मन को तुम्हीं को भजूँ मैं ॥ ८ ॥
छुड़ा अपना पीछा ज़रा के.डी. सिंह अब ।
ध्यान अपने मालिक का हर दमधरूँ मैं ॥६॥

भला मैं शान्त हूँ कैसे, फंसा मन भोग भोगों में ।
तितीक्षा की नहीं कुछ भी, लगा मन दुष्ट कर्मों में ॥१॥
तपस्या भी नहीं की है, नहीं है ज्ञान कुछ मुझ को ।
गुनाह गठरी धरी सिर पर, लगा हूँ मैं कुकर्मों में ॥२॥

जगूँ अब ख्वाब गफ़लत से, सुधारूँ अपने कर्मों को।
जला कर पुण्य-पाप अपना, रँगा लूँ मन को रंगो में ॥३॥
भुलाकर माज़ी मुतलक़ को, सुधारूँ हाल का जीवन।
करूँ मैं प्रेम से भक्ति, पड़ूँ जगदीश शरणों में ॥४॥
नहीं कुछ डर है के. डी. सिंह, मेरा मालिक दयालु है।
रहम और धर्म करता है, गिरूँ मैं उसके कदमों में ॥५॥

क	कृपा तेरी से अय भगवन !	श	शरीर अपना चलाता हूँ ॥
न	नहीं संदेह कुछ मुझको	द	दरश तेरे को पाता हूँ ॥
य	यदी अल्पज्ञ बुद्धि है	ा	अखंड ज्योती जगाता हूँ ॥
ल	लगी पीछे है प्रकृती	स	सरासर मैं हटाता हूँ ॥
ा	नहीं डर हो किसी का भी	ग	गुज़ारिश यह मैं करता हूँ ॥
ह	होय सरसब्ज़ यह भारत	र	ऋषि उपदेश गाता हूँ ॥
अ	अगर मालिक की मर्ज़ी हो	य	यही ख्वाहिश मैं रखता हूँ ॥
स	सुबह और शाम अय भगवन	ा	अलख झंडा उड़ाता हूँ ॥
ह	हरारत भक्ति तेरी में,	व	वहुत कुछ ज्ञान पाता हूँ ॥
क	करो नित कर्म के. डी. सिंह	भ	भजन में लीन होता हूँ ॥

ज़रा देखूँ सताता कौन था मुझको ?

ज़रा सोचूँ लुभाता कौन था मुझको ? ॥ १ ॥

परेशां कर दिया किसने है दुनियाँ में ।

मेरी बुद्धि हरी दुःख क्यों दिया मुझको ? ॥ २ ॥

बता दो कौन साथी बन गया यहाँ पर ।

अजी ज़िंदा को मुर्दा क्यों किया मुझको ? ॥ ३ ॥

दशा बिगड़ी मेरी क्यों है जगत में ।

नहीं क्यों नाम आता ओ३म् का मुझको ? ॥ ४ ॥

रखा है द्वेष आपस में उमर भर ।

यही कारण हुआ है बन्ध का मुझको ॥ ५ ॥

हुआ जब वक्त आखिर का अरे मूरख ।

कठिन रस्ता कटे कैसे बता मुझको ? ॥ ६ ॥

जब होगा सामना ईश्वर का यक दिन ।

करूँ फ़रियाद क्यों तुझ से, कि अन्तर्यामि जग का है।
नहीं कुछ भी छिपा तुझसे, तु भगवन् स्वामी जग का ॥१॥
तुझी को भजते हर एक जीव, सफल जीवन को करते हैं।
तेरा ही नाम जप जप कर, तुझी में ध्यान सब का है॥२॥
तेरी पूजा को हम करते, तेरे गुण गान हम गाते।
तेरी मर्ज़ी पर हम चलते, तू ही अति प्यारा लगता है ॥३॥
तेरे मशकूर हैं हम सब, नहीं हमको है शिकवा भी।
तेरे दर्शन को सब चाहें, तू ही ईश्वर जगत का है ॥४॥
बनादे फिर तो ज्ञानी तू, दिखादे सर्व शक्ती को।
जमादे ध्यान के. डी. सिंह, ये हरिमिलने का रस्ता है ॥५॥

शरण चरणों में जब आया, प्रकृती ने हटा दीना।
हरा मन बुद्धि मेरी को, मुझे मद ने दबा दीना ॥१॥
अहंकारी बना मैं तो, करी फिर द्वेष से प्रीती।
लगाकर मन को विषयों में, मुझे लोभी बना दीना ॥२॥
नहीं था ज्ञान कुछ मुझको, विचारा कुछ नहीं मन।
ईश भक्ती न की मैंनें, वृथा जीवन बिता दीना ॥३॥

अवस्था अन्त जब आई, हुई दुर्बल मेरी काया ।
फिरा मन मेरा दुनियां से, गुरु शिक्षा जगा दीना ॥४॥
समय अब तो बहुत कम है, सफर अगला बहुत मुश्किल ।
मगर फिर भी कमर बांधी, ध्यान अपना बटा दीना ॥५॥
चला जाता है के. डी. सिंह, करम पिछले भुला करके ।
नज़र भ्रकुटि में क़ायम कर, प्रकाश उसका लखा दीना ॥६॥

हुआ जब मोह अर्जुन को, महा भारत के अवसर पै ।
लड़ाइ भाई बन्धों से. चलायें शस्त्र क्यों करके ॥१॥
द्रोणाचार्य भीष्म जी, खड़े थे सामने उसके
वह क़ाबिल थे परिस्तिश के, लगायें तीर क्यों करके ॥२॥
ज़रा स राज के ऊपर, लड़ाई ठान आपस में ।
चलायें शस्त्र भाइयों पर, बहायें खून क्यों करके ॥३॥
त्रिलोकी का मिले गर राज, न वाजिब मारना उनका ।
नहीं मालूम जीते कौन, मिटायें नाम क्यों करके ॥४॥
न ख्वाहिश राज करने की, न परवा अपने जीवन की ।
इरादा भीख पर उसका, करायें हत्या क्यों करके ॥५॥

जो आवें शस्त्र लेकर वह, व मारें मुझ निहत्थे को।
खुशी से जान दूँ अपनी, सतायें उनको क्यों कर के ॥६॥
अगर माना कि जीते हम, रँगा कर खून से तन मन।
नहीं मतलब है भोगों से, करायें राज क्यों कर के ॥७॥
करा इनकार अर्जुन ने, लडूँगा मैं नहीं उनसे।
दुखी थी आत्मा उसकी, दुखायें पाप क्यों कर के ॥८॥
ये ही है मोह के. डी. सिंह, इसे अज्ञानता समझो।
विषय इस पर है गीता ज्ञान, भुलावें उसको क्यों कर के॥९॥
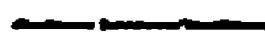
नव अध्याय मे अर्जुन से यूं भगावन फरमाते।
विद्या श्रेष्ठ और है गुप्त वो पारथ को समझाते ॥१॥
पत्र फल फूल और जल ज्यो, मुझे देता है भक्ती से।
प्रेम से खाता हूं वो ही मुझे ज्यो प्रेमी खिलवाते ॥२॥
सारे यज्ञों का हूं भोक्ता वह स्वामी हूं सभी का मैं।
ज्यो यह नहीं जानते हैं तत्व से वो नर हैं गिरजाते ॥३॥
हूं सब का मैं पिता माता, ध्याता ऊँकार मैं ही हूं।
ऋग्यजु साम वेदादि मैं ही हूं जो कहे जाते ॥४॥

पूजते कोई देवों को, या पित्रों को या भूतों को ।
वो पाते हैं उन्ही को और भक्त, मेरे मुझ हि को पाते ॥५॥
ज्यो वैदिक यज्ञ करते हैं, स्वर्ग सुख भोगते हैं वो ।
पुण्य के क्षीण होने पर, वो फिर संसार में आते ॥६॥
न तू करता हो कर्मों का, मगर हो साक्षी उनका ।
यह के. डी. सिंह है निश्चय, समझ करके हरी ध्याते ॥७॥

राधेश्याम जय राधेश्याम ।
कर निस दिन उन्हीं को प्रणाम ॥१॥
हरी जगदीश मदन मोहन ।
भक्त जनन के जीवन धन ॥२॥
मदन मोहन हरि सुन्दर श्याम ।
कर निस दिन उन्हीं को प्रणाम ॥३॥
मगन मन होकर उनकी याद ।
ध्यान लगा तज बाद विवाद ॥४॥

स्वांस स्वांस में जप हरिनाम ।

कर निस दिन उन्हीं को प्रणाम ॥५॥

है विनती यह पकड़ो हाथ ।

भव से तारो हे व्रजनाथ ॥६॥

दीजे हमको अपना धाम ।

कर निस दिन उन्हीं को प्रणाम ॥७॥

नहीं होवे फिर जन्म मरन ।

हमने ली प्रभु चरन शरन ॥८॥

देओ भक्ति हो पूरण काम ।

कर निस दिन उन्हीं को प्रणामँ ॥९॥

शरणागत वत्सल सुख धाम ।

दीन बन्धु आरत हर नाम ॥१०॥

क. दी. सिंह भज आठों याम ।

कर निस दिन उन्हीं को प्रणाम ॥११॥

उजाला ज्ञान दीपक का, करो तुम मेरे हृदय में ।
सँभालूँ आप अपने को, मगन होकर के हृदय में ॥१॥
तेरी ज्योती पै परवाने, हवन करते हैं अपने को ।
इसी विधि ज्ञान दे भगवन, मग्न हो जावें हृदय में । २॥
उठाया प्रेम का बीड़ा, चखा उसको भक्त बनाकर ।
ज्योंही मन को किया काबू, मुखातिब होके हृदय में ॥३॥
कहूँ क्या ज़ायका उसका, नहीं शक्ति ज़ुबां को है ।
कलम से लिख नहीं सकता, जो देखा मैंने हृदय में ॥४॥
अजब हैरान के. डी. सिंह, नहीं कुछ मैं बता सकता ।
वह ईश्वर सर्व व्यापी है, बिठालें अपने हृदय में ॥५॥

दया का भन्डार खुला हुवा है ।
दया की भिक्षा भी मिल रही है ॥१॥
दया के बादल भी घिर रहे हैं ।
दया की नदियां उभल रही हैं ॥२॥

प्याले अमृत के भर भरा कर ।
रखे हैं हाज़िर जगत पति ने ॥३॥
हमारी श्रद्धा भी होगी पूरण ।
जब वृत्ति मन की अचल रही है ॥४॥
तब ही तो हमको मिलेगा मौक़ा ।
जब ही तो अधिकार गहम होगा ॥५॥
इसी के दर पर झुका के माथा ।
दर्श को तबीयत मचल रही है ॥६॥
खड़े हैं हम तो अनाथ बन कर ।
परम पिता को करें हैं सिजदा ॥७॥
क्षमा करेंगे क़सूर सब का ।
कृपा सदा से अटल रही है ॥८॥
सभी की प्रीति को छोड़ कर के ।
यह सिंह के. डी. पड़ा है चरणों ॥९॥
हुवा है निर्भय यम से अब तो ।
मोत भी दिल में दहल रही है ॥१०॥

नवाज़िश तेरी का नहीं कुछ पता ।

नज़र है तेरे रहम पर हे पिता ॥१॥

नहीं कोई तुझसा सखी है यहां ।

गदा की तू हसरत को देवे मिटा ॥२॥

करी याद संकट में जिसने तेरी ।

मदद तुमने की दिया कष्ट हटा ॥३॥

नहीं देखा दुनियां में ऐसा कोई ।

हुआ जो कि मयूस तुमको रटा ॥४॥

कहाँ तक करूँ रहम का शुक्रया ।

मुझे ऐसी शक्ति कहाँ है बता ? ॥५॥

सुनो मेरी विनती ज़रा ग़ौर से ।

किससे कहूं मैं यह अपनी व्यथा ? ॥६॥

खड़ा सिंह के॰ डी॰ तेरे सामने ।

जगन्नाथ भक्ती करो अब अता ॥७॥

सहारा तुम्हारा ही ढूँढा हरीहर ।
मेरी लाज को तुम्हीं रखना हरीहर ॥१॥
किये कर्म मेरे पे रहमत करो तुम ।
ज़रा हाथ शफ़कृत का धरना हरीहर ॥२॥
मैं नादान बालक हूं तेरा यहाँ पर ।
तुझी पर भरोसा मै करता हरीहर ॥३॥
तेरे खोज में मैं दीवाना बना हूं ।
तुझे ढूँडता मैं तो फिरता हरीहर ॥४॥
मुझे माधो दे दो ज़रा ज्ञान तो यह ।
मुझे भक्ति अपनी में लेना हरीहर ॥५॥
मेरे पाप की क्या है गिनती यहां पर ?
ठिकाना तेरे रहम का क्या हरीहर ? ॥६॥
बिठाले तेरी गोद में के. डी. सिंह को ।
यह सागर में डूबे बचाना हरी हर ॥७॥

———

मुझे दर्द फ़रियाद कुछ भी नहीं है।
सिवा तेरी याद याद कुछ ही नहीं है ॥ १ ॥

जो तूने दिया है मेरे प्राण दाता।
सिवा शुक्रया और कुछ भी नहीं है ॥ २ ॥

मैं क़ाबिल बनूं तेरी सेवा के ईश्वर।
मगर पाप तापों से मुक्ती नहीं है ॥ ३ ॥

कुसूरों को मेरे क्षमा करना भगवन्।
प्रभो भक्ति दो मुजको भक्ती नहीहैं ॥४॥

तू दातार मेरा मैं हूँ तेरा किंकिर।
मुझे ज्ञान शक्ति दो शक्ती नहीं है ॥५॥

इसी की तो मालिक ने कंजूसी की है।
विला उसके वख्शे यह मिलती नहीं है ॥६॥

यही अर्ज़ है सिंह के॰ डी॰ यहां पर।
तेरी मेहर विन मेरी मुक्ती नहीं है ॥७॥

सुदामा ने तुमसे करी जब पुकार ।

दरिद्र मिटा दिया द्रव्य अपार ॥१॥

रूखा साग तुमने विदुर घर हरी जी ।

दया कर के अज्ञान किरपा करी थी ॥२॥

थी नरसी की इज्जत भी तुमने रखी ।

सिकारी थी हुन्डी उसी की सभी ॥३॥

किया कोप जब इन्द्र ने व्रज के ऊपर ।

उठाया गोवर्धन को उँगली से ऊपर ॥४॥

मिटा इन्द्र अभिमान तुमसे मुरारी ।

करी व्रज की रक्षा किये सब सुखारी ॥५॥

कुकर्मों से संसार जब भर गया था ।

तो पृथ्वी ने शरणां तुम्हारा लिया था ॥६॥

ज्ञान अपना तुमने तो फैला दिया था ।

उजाला किया और तम हर लिया था ॥७॥

धरा भार करमों का सिद्द के. डी. आगे ।

हटालो उसे ज्ञान उपदेश करके ॥८॥

तुम्हारे सहारे के हम मुन्तज़िर हैं,
तुम्हारे ही खोजों से हम बे ख़बर हैं।
चले जाते हैं रस्ते रस्ते यहां पर,
तुम्हारी करामत पर हम बे फ़िकर हैं ॥१॥
करें कोशिशें दिल से मिल जावो तुम,
तो महर बिन तुम्हारे सभी बे समर हैं।
कठिन मार्ग ऐसा कटेगा ही कैसे,
इन्हीं हसरतों में तो हम बे सबर हैं ॥२॥
गुनाहों का बोझा बहुत ही है भारी,
घटे किस तरह बिन तुम्हारी महर है।
गुनाहों का बखशिन्दा तुमको ही पाया,
तुम्हारी बजह से तो हम बे ख़तर हैं ॥३॥
पड़े क़ैद बन्धन में हैं हम यहां पर,
हिरासत तुम्हारी में हम भी निडर हैं।
भजन सिंह के० डी० करो ओ३म् का तुम,
नजर भी हमारी उसी की नज़र हैं ॥४॥

तुझे अपनी भक्ति में लेना पड़ेगा ।

मुझे चरन की शरन रखना पड़ेगा ॥१॥

करामत तेरी का ही है नाज़ मुझको ।

मेरे मन को अब शुद्ध करना पड़ेगा ॥२॥

दृष्टि दया की जो हो जावे भगवन् ।

तो कर्मों का भारा हटाना पड़ेगा ॥३॥

मेरा रात दिन ध्यान तुझ में लगे ।

मुझे ज्ञान मारग चलाना पड़ेगा ॥४॥

मुझे तेरा दर्शन जब हो जावेगा ।

निज भक्ती की भिक्षा को देना पड़ेगा ॥५॥

चरण शरण में सिंह के. डी. को चित लेकर ।

परम शान्ती आसन बिठाना पड़ेगा ॥६॥

मेरे देव भगवन् मेरे कृष्ण मोहन,

नहीं ज्ञान मुझको ज़रा ज्ञान दे दे ॥

तेरा नूर कैसा जगत को प्रकाशा,

मेरा हृदय काला तेरा भानु दे दे ॥

मेरा भाग ऐसा मेरे माग्य दाता,

पड़ूँ तेरी शरणां शरण दान दे दे ॥

पड़ा बीच धारा मैं बे बस यहां पर,

नहीं जान बाकी मुझे जान दे दे ॥

मुझे गोद अपनी बिठाले हरी हर,

नहीं ध्यान तेरा मुझे ध्यान दे दे ॥

मेरी विनती सुनले किनारे लगादे,

खड़ा सिंह के. डी. यह वरदान दे दे ॥

जगन्नियन्ता जगत के रचता,

नमस्ते स्वामी तुम्हें विधाता ।

जगत के पालक जगत के पोषक,

नमस्ते स्वामी तुम्हे विधाता। १ ॥

जगत को धारण किया है तुमने,

बनाये चन्दा सुरज व तारे।
हमारे कारण बनाई वस्तु,
नमस्ते स्वामी तुम्हे विधाता ॥ २ ॥

तुम्हारा विज्ञान पाके ईश्वर,
मनुज है दुःखों से छूट जाता।
हमें भी शक्ति हो आत्मा की,
नमस्ते स्वामी तुम्हें विधाता ॥ ३ ॥

तुम्हारा जप करके नाम स्वामिन्,
तुम्हारा धर कर के ध्यान भगवन्।
पड़े हैं चरणों तुम्हारे भिक्षुक,
नमस्ते स्वामी तुम्हें विधाता ॥ ४ ॥

शरण में आकर पड़ा जो चरणों,
न त्यागा उसको कभी भी तुमने।
दयालु सब के हो तुम तो बेशक,
नमस्ते स्वामी तुम्हें वि धाता ॥ ५ ॥

के.डी. सिंह धर तु ध्यान उसका,

जमा ले हृदय में ठाम उसका।

ज़ुबाँ पर हर दम हो नाम उसका,

नमस्ते स्वामी तुम्हें विधाता ॥६॥

ज्ञान

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृतं स्मर ॥

यजु. अ. ४० मं. १७

अर्थः—आखिरी वक्त यानी उस समय जब कि इन्सान का आत्मा इस शरीर को छोड़ता है उस समय के लिये वेद भगवान् का यह उपदेश है कि हे मनुष्य तू आत्मा को अमर और शरीर को नाशवान समझकर रंज मत कर किन्तु अपने किये हुये कर्मों का स्मरण करता हुवा आत्मिक बल की प्राप्ति के लिये ओ३म् जिसका वाचक है। उस जगदीश्वर का ध्यान कर।

॥ नज़्म में ॥

यजुर्वेद अध्याय चालीस में,
विचारो लिखा सतरवें मन्त्र में ।

मनुष्य का समय अन्त होने को हो,
विदा आत्मा देह से होती हो ॥
कहा वेद भगवान् ने इस तरह से,
दिया उसने उपदेश है इस तरह से।
अमर जान कर आत्मा अपनी को तू,
समझ नाशवान अपनी इस, देह को तू ॥
न कर शोक हर्गिज कभी इसका तू अब,
ये जीवन मरन एकसा जान तू अब।
करम जो किये हैं सुमरता हुवा जब,
जुबाँ से निकालो शब्द ओ३म् का तब ॥
बढ़ाने को शक्ती फिर आत्मा की,
लगा ध्यान ईश्वर में संसार धारी।
अखीरी समय के. डी. सिंह आवे जब,
करो याद फ़ौरन यह उपदेश तब ॥

सिवा तेरे नहीं कोई, पतित पावन हे जगदीश्वर ।
दीन में दीनवन्धु तुम, हो श्रीभगवन् हे जगदीश्वर ॥
यह देखा खूब है मैंने, कोई साथी नहीं जग में ।
न भ्राता पुत्र और स्त्री, कुटुम्बी जन हे जगदीश्वर ॥
करूँ उम्मेद किस से मैं, मेरी नौका अधर्मों से ।
भरी है डगमगाती है, बचा फ़ौरन हे जगदीश्वर ॥
लगादे जो किनारे पर, मेरी नौका को सागर के ।
अंधेरी रात और नैया, मेरी जीरन हे जगदीश्वर ॥
खुले जब ज्ञान के चक्षू, मिटे सब पाप जीवन के ।
तो उतरे पार के. डी. सिंह, सुफल हो तन हे जगदीश्वर ॥

ये जीवन चन्द रोज़ा है, सँभल कर तुम यहाँ चलना ।
न करना इसमें कुछ ग़फ़लत, समझ कर पैर तुम रखना ॥१॥
सफ़र ऐसा बनाया है, फ़रज़ ऐसा बताया है ।
बनी हैं तीन शालायें, सफ़र चहूं धाम का करना ॥ २ ॥

दखल हो जब बुढ़ापे में, बसो सन्यस्थ आश्रम में।
तो शिक्षा ज्ञान फैला कर, तार कुल दुनियां हो फिरना ॥३॥
सुफल अपना जन्म करलो, फरज़ अपना अदा कर दो।
दृष्टि भृकुटि में रख कर के, ध्यान निज आत्म का धरना ॥४॥
श्री जगदीश के चरणों की, ले लो शरण के. डी. सिंह।
देवेंगे मोक्ष पद तुझको, न होगा जन्मना मरना ॥ ५ ॥
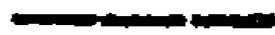
प्रभु हो जाओ महरबां, बता दो क्या है ये दुनिया ?
रची ये सृष्टि है किसने ? लगाये फूल फल जिसने, ॥ १॥
पशू पक्षी मनुष्यादि, पहाड़ों वृक्ष इत्यादि।
बग़ीचा क्यों बनाया है ? तमाशा क्यों दिखाया है ? ॥२॥
नहीं कुछ भेद मिलता है, नहीं कुछ राज़ खुलता है।
ये माली है करामाती, तुच्छ बुद्धि है घबराती ॥३ ॥
छुपा बैठा है पर्दों में. लिखा है हाल वेदों में।
नज़र आता है ज्ञानी को, दरस देता है ऋषि मुनिको ॥४॥

मैं मुतलाशी बना उसका, मुझे है आसरा उसका ।
हटे अज्ञान का परदा, मिटे संसार का फंदा ॥ ५ ॥
तो दर्शन उसके कर लेगा, जनम अपना सुधारे गा ।
जगो सिंह के. डी. गफ़लतसे, लगन रखो इबादतसे ॥६॥

मुझे सब कुछ दिया भगवन्, नहीं कुछ वासना बाक़ी ।
किया दुनियाँ में सब कुछ ही, नहीं कुछ चाहना बाक़ी ॥१॥
निछावर करके अपना पन, इन्हीं दुनियाँ के धन्दों में ।
लिया नहिं नाम ईश्वर का, इसी की कामना बाक़ी ॥ २ ॥
मिले भक्ती मुझे क्यों कर, बता दे मुझ को तू स्वामी ।
छुड़ादे पीछा बन्धन से, रहे कुछ आस ना बाक़ी ॥ ३ ॥
पियाला ज्ञान भर भर कर, पिलादे मुझ को हे प्रियवर ।
मुझे मद होश कर दे जब, तुझे जानू मैं अय साक़ी ॥४॥
कलेजा मेरा ठण्डा हो, उजाला ज्ञान दीपक हो ।
पड़े चरणों में के. डी. सिंह, रहे यम त्रास ना बाकी ॥५॥

हरी हर नाम रट रट कर, मैं तै करलूं सफ़र अपना ।
इस ख़ाकी जिस्म को पावन, बनालूं जाप कर अपना ॥१॥
सुफल जीवन मेरा जब हो, उजाला ज्ञान दीपक का ।
खुदी जब दूर हो मन से, बने दिलवर का घर अपना ॥२॥
मेरी आशा हो जब पूरण, मिलें उसके मुझे दर्शन ।
प्रभु के चरणकमलों में, अगर मन हो भ्रमर अपना ॥३॥
भिखारी है यह के. डी. सिंह, प्रभू दर्शन का अभिलाषी ।
देवो भिक्षा खड़ा दर पर, झुका कर के यह सर अपना ॥४॥

है आशा तुमसे स्वामीजी, हटा दो लोभ दुनियाँ का ।
करो उजियाला हृदय में, मिटादो मोह दुनियाँ का ॥१॥
मेरी दृष्टी बने सुन्दम, द्वेष नहिं हो किसी से भी ।
करूँ फिर ध्यान तेरा मैं, बनादो फूल दुनियां का ॥२॥
नहीं हो फिक्र संशय कुछ, मगन हो मन जगतपति में ।
भुला कर के खुदी अपनी, कढ़ा दो शूल दुनियाँ का ॥३॥

जबं मारग साफ़ होजावे, निकट होजाऊं ईश्वर के।
न सुख दुःख की हो कुछ परवाह, कटादो बन्ध दुनियां का॥ ४
मुझे दे शक्ति हे ईश्वर, मिले दर्शन मुझे तेरे।
हटे अज्ञान अंधियारा उठादो परदा दुनियां का॥ ५॥
मिले जब शान्ति मुझ को, तो देखूं ब्रह्म हर एक में।
करो लैं उस में कें. डी. सिंह भुलादो खयाल दुनियां का। ६

लगी लौ तुझ म हे स्वामिन्, नहीं सुधबुध है तन मन की।
भुलाया तुमको जीवन धन, नहीं सुध बुध है तन मन की॥
नहीं है काम दुनियां से, ज़रूरत है नहीं कुछ भी।
नहीं है मोह कुछ भगवन्, नहीं सुध बुध है तन मन की॥
मैं आया द्वार तेरे हूँ, खड़ा चरणों के दर्शन को।
हटा पर्दा देओ दर्शन, नहीं सुध बुध है तन मन की॥
उठे अज्ञान का पर्दा, दरश जब हो जगतपति का।
दीखते ज्ञान के नयनन, नहीं सुध बुध है तन मन की॥

मैं माँगू भीख भक्ती की, लगा कर दृष्टि भ्रकुटि में।
यह के. डी. सिंह पड़ा चरनन, नहीं सुध बुध है तन मन की॥

भजूँ नित नाम मालिक का, नहीं बन्धन में मैं पड़ना।
मरण जीवन के दुखों को, नहीं मैं सहन कर सकता॥१॥
बुरा आवागमन है और, बुरा सम्बन्ध दुनियाँ का।
बुरे रिश्ते वो नाते हैं, मैं उन का मोह नहिं करता॥२॥
नहीं साथी कोई लाया, अकेला आया दुनियाँ में।
कहाँ रिश्ता कहाँ नाता, मैं फन्दों में नहीं फँसता॥३॥
जगत सारा ही मिथ्या है, जगत व्यवहार झूठा है।
है सच्चा नाम भगवत का, मैं द्वन्द्वों में नहीं गिरता॥४॥
तो फिर सोचो ज़रा दिल से, उजाला करके अन्तर मे।
बनो मुतलाशी ईश्वर के, वोही करता वोही भरता॥५॥
यह सोचो तुम तो के. डी. सिंह, यह आना जाना क्या शय है।
यह दुनियाँ क्या है तुम क्या हो, विचारो मुक्ति का रस्ता॥६॥

नशा है मुझको भगवत का, नहीं ख्वाहिश है दुनियाँ में।
नहीं कुछ सुक्ख दुनियाँ में, सदा रहता परेशां मैं ॥१॥
भजूँ निश दिन मैं ईश्वर को, लगा तन मन को मालिक में।
मिले जब शान्ती मुझको, मगन हरिध्यान हूँ यहां मैं ॥२॥
नहीं परवाह जीवन की, नहीं डर मौत का मुझको।
बिसारूँ सारे मैं झगड़े, भक्ति कर होऊँ शैदा मैं ॥३॥
मेरा मन शुद्ध जब होगा, रटूँगा नाम भगवत का।
करूँगा आसरा उसका, उसी का लूंगा शरणा मैं ॥४॥
मुझे फिर क्या ज़रूरत है, करूँ क्यों मोह दुनियाँ से।
मेरी श्रद्धा हो सम्पूरण, रहूँ जग में न हैरां मैं ॥५॥
छुटा कर मोह के. डी. सिंह, लगूँ भक्ति में ईश्वर के।
करूँगा पार अपने को, लगा के उस की रटना मैं ॥६॥

पड़ा सोता था गफ़लत में, यका यक खुल गई आँखें।
नहीं सूझा मुझे कुछ भी, खुली यों ही रही आँखें ॥१॥

किसी ने कान में फूँका, कहा हुशियार हो जाना ।
सुबह अब हो गई भाई, यह सुन कर खोल दी आँखें ॥२॥
पशू पत्ती भी जग उट्ठे, सफ़र आगे का मुश्किल है ।
खड़े होकर कमर बाँधो, यह कैसे मिचगई आँखें ॥३॥
नदी है इक वड़ी भारी, उतरना पार उसके है ।
किनारे पर मैं आ पहुँचा, अरे ओ निरदई आँखें ॥४॥
नहीं है दूर परमेश्वर, हटे अज्ञान का परदा ।
उलट कर देखले अपने में, अपना यार री ! आँखें ॥५॥
गुरु किरपा से के.डी.सिंह, लखो जगदीश स्वामी को ।
उसी के दरश को ललचा रही, देखो कई आँखें ॥६॥

———

वही आत्मा सच्चिदानन्द हूँ मैं,
भरम जिस का जाना है निर्द्वन्द हूँ मैं ॥
लगे याद में जिस के योगी यती हैं,
करम जिस के मिलने को करते सभी हैं ।

धरें ध्यान जिस का भगत और मुनी हैं,

मिले ज्ञान जिस का तो ज्ञानी मुनी हैं ॥

वही आत्मा० ॥१॥

धर्म जिस के पाने को इन्सां करें हैं,

जिसकी दान यज्ञों से सेवा करें हैं।

जिसे वेद हरवक्त गाया करें हैं,

भक्त जिस को हरवक्त ध्याया करें हैं ॥

वही आत्मा० ॥ २ ॥

दरस जिस का पाकर मगन हो गये हैं,

परस जिस का पाकर के गुम होरहे हैं।

जिसे देख कर कोई कहते नहीं है,

गूँगे का गुड़ कहते सुनते नहीं हैं।

वही आत्मा० ॥३॥

नहीं आदि और अन्त जिस का कहीं है,

कहीं मिलता जिस का ठिकाना नहीं है।

बड़े से बड़ा है वह छोटे से छोटा,

भगत जिसकी भक्ती कर वापस न लौटा।

वही आत्मा० ॥४॥

जिसे ध्यावें हम जिसके प्रेमी बनें हम।

भजन जिस का गाकर के सेवी बने हम।

जो भरमन कराता है संसार को।

नट इव नचाता है संसार को।

वही आत्मा० ॥५॥

रमा है जो घट घट में परमात्मा।

जो मौजूद है हर जगह हर समा।

हर एक फूल फल में जो है रम रहा।

बिना जिसके कोई है खाली जगा।

वही आत्मा० ॥६॥

जिसे जानकर फिर न अज्ञान है।

जिसे मानकर फिर न अपमान है।

जिसे खोजकर फिर न अरमान है।
जिसे ध्यान करके न हैरान है।
वही आत्मा० ॥७॥
जिसे पूजकर फिर न पूजा किसी की।
जिसे देख कर फिर न ममता किसी की।
नहीं वांछा है मुझे सिंह के. डी.।
सिवा याद ईश्वर न चरचा किसी की।
वही आत्मा सच्चिदानन्द हूँ मैं ॥८॥

बता दे कोई यह मुझको, वोह ईश्वर किससे न्यारा है
वह तुझमें और मुझ में है, जगत उसका पसारा है ॥ १ ॥
वही मौजूद है हर जा, वो ही मेरा सहारा है।
वह सुख दाता हमारा है, मेरा भी प्राण प्यारा है ॥ २ ॥
अगर नित नाम उसका लें, करें कुर्बान दिल अपना।
नहीं संकट कभी आवें, वोही अपना अधारा है ॥ ३ ॥

ज़ुबाँ पर नाम उसका है, हृदय ही धाम उसका है।
तो फिर बाक़ी रहा क्या है, वो ही निस्तार धारा ॥४॥
नहीं दुनियाँ से मतलब है, नहीं कोई लगा साथी।
करूँ सत्संग सन्तों से, तो फिर मेरा सुधारा है ॥ ५ ॥
करूं मैं ग़ौर के. डी. सिंह, तमाशा देखता क्या हूँ।
चरण ईश्वर के गिर जाऊँ, तो मेरा तब उधारा है ॥ ६ ॥

ज़रा अपना जीवन सुधारो तो प्यारे।
ज़रा नाम ईश्वर का भजलो तो प्यारे ॥१॥
लड़क पन जवानी खतम हो गये हैं।
बुढ़ापे को अपने सँभालो तो प्यारे ॥२॥
हुई साँझ जीवन की संभलो ज़रा तुम।
ध्यान अपना उस में लगा लो तो प्यारे ॥३॥
भरोसा नहीं ज़िन्दगी का ज़रा भी।
जो कुछ भी करना है कर लो तो प्यारे ॥४॥

न मालूम किस वक़्त, हो जाय तलबी ।
सोऽहम् जप की आदत, बनालो तो प्यारे ॥५॥
सफ़ा करके मन अपना, उठ जाओ तुम भी ।
इसी रंग म मन को, रँगालो तो प्यारे ॥६॥
बहुत वक़्त कम रह गया, के. डी. सिंह का ।
अब ध्यान नासाग्र, जमालो तो प्यारे ॥७॥

ग़रीबों का दिल, गर दुखाया करोगे ।
तो तुम भी नहीं, चैन पाया करोगे ॥ १ ॥
नहीं फ़र्क़ तुम में, और उसमें कभी भी ।
यही भेद दिल में, विचारा करोगे ॥ २ ॥
जो वह हैं सो तुम हो, जो तुम हो सो वह हैं ।
ये हो ज्ञान तब हरि, लखाया करोगे ॥ ३ ॥
अगर इसमें कुछ फ़र्क़, करते रहोगे ।
तो मालिक की नज़रों से, गिरते रहोगे ॥ ४ ॥

हर एक चीज़ में, आत्मा एक देखो।
कभी भेद इस में, न ज़ाना करोगे ॥ ५ ॥

यह चोला बना, पाँच भूतों का पुतला।
इसे जन्मता मरता, देखा करोगे ॥ ६ ॥

अलग जीव इससे, जभी होवेगा यह।
तो इस देह का नाश, करते रहोगे ॥ ७ ॥

इस फ़ानी दुनिया का, बन्धन कटे जब।
गुण के. डी. सिंह, उसके गाया करोगे ॥ ८ ॥
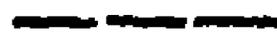
मेरा जीव तन से, जुदा हो र है।
लो सम्बन्ध दुनियाँ का, यह खो रहा है ॥१॥

खड़े भाइ बन्धु क्यों, मातमी क्यों?
वह रोते हैं किस को, यह तन तो पड़ा है ॥२॥

किया जिस से नाता था, तुमने यहां पर।
वह क़ालिब पड़ा, देख लो सो रहा है ॥३॥

ज़रा ग़ौर कर के, यह तुम सोच लेना ।

यह आया कहाँ से, कहाँ को गया है ॥४॥

नहीं बोलता है, नहीं देखता है ।

मकाँ का मकाँ अब, तलक जो रहा है ॥५॥

बताओ तुम्हारा, यह क्या ले गया है ?

यह सब कुछ यहाँ का, यहीं तो रहा है ॥६॥

अकेला यह आया था, दुनियाँ के अन्दर ।

अकेला यहाँ से, बिदा हो रहा है ॥७॥

नहीं सोचने योग्य है, सिंह के॰ डी॰ ।

वो दिलबर के दर का, गदा हो रहा है ॥८॥

उठो अब तो जागो, सहर हो गई है ।

नहीं रात बाक़ी, फजर हो गई है ॥ १ ॥

बहुत सोये तुम, ज़िन्दगी भर जहाँ में ।

तुम्हारी यह बुद्धि, किधर खो गई है ॥ २ ॥

ज़रा आँख खोलो, यह क्या हो रहा है।

यह बत्ती बिना तेल, गुल हो रही है ॥ ३ ॥

सँभालोगे तुम इसको, और सींच लोगे।

वगरना यह ज्योती, सफ़र कर गई है ॥ ४ ॥

जो पुन पाप तुमने, किये हैं जगत में।

नतीजे से अब मेरी, रूह डर रही है ॥ ५ ॥

अगर पाप पुराय को, करो कृष्ण अर्पण।

तो भोगों की आशा की, जड़ जल गई है ॥ ६ ॥

बिताओगे जीवन, जो तुम इस तरहा से।

तो फिर मोक्ष रहने को, घर हो गई है ॥ ७ ॥

रहो बे फ़िकर तुम तो, अय सिंह के. डी.।

तुम्हारे पे गुरू की, महर हो गई है ॥ ८ ॥

करूँ तैयारी भोजन की, मेरी है आत्मा भूखी।

खबरली खाकी इस तनकी, रखी है आत्मा भूखी ॥ १ ॥

नहीं होती है यह सन्तुष्ट, षट रस व्यंजनादि से ।
ज्ञान विज्ञान भोजन है, आत्मा का अनादी से ॥ २ ॥
नहीं सत्सङ्ग वनता है, नहीं भक्ती नज़र आती ।
पड़ा हूँ घोर कष्टों में, नहीं मिलता करामाती ॥ ३ ॥
मिले भोजन भला क्योंकर, फँसा दुनियाँ के धन्धों में ।
ज़रा मैं ध्यान धरता हूँ, विकल मन होता द्वन्दों में ॥४॥
किसी कॉमिल को ढूँढू मैं, करूँ विज्ञान कुछ हासिल ।
परेशानी मिटे दिलकी, होउं भगवान् में वासिल ॥ ५ ॥
ज़रा सँभलुँ मैं के. डी. सिंह, दुरवलता हटाऊँ मैं ।
भजन भगवान् का करके, महानात्मा वनाऊँ मैं ॥६॥

अगर मालिक से मिलना है, तो सोऽहम् जाप जपता जा ।
उसी के शब्द सुनता जा, हर एक छिन याद करता जा ॥१॥
उसी के रंन रँग लेना, उसी का खोज कर लेना ।
ज़रा अमृत को पीता जा, उसी का ध्यान धरता जा ॥२॥

चला चल सीधे रस्ते पर, फ़िराक़े वस्ल दिल में रख।
सफ़ा मन अपना करके तब, द्वेष अपना छुटाता जा ॥३॥
न जा मंदिर न मर भूखा, न बन दुनियां का तू कांटा।
अधर्मों से तू बचताजा, धरम अपना बढ़ाता जा ॥४॥
भरोसा है न जीवन का, न है परवाह उकृबा की।
तो फ़िर हैरान ही क्यों है, उसी में मन लगाता जा ॥५॥
सभी में ब्रह्म यकसाँ है, उसी के हैं सभी बन्दे।
उसी का दास तू भी है, दुई दृष्टी हटाता जा ॥६॥
मिटादे मोह मद को तू, न बन लोभी कभी हर्गिज।
नहीं यह काम आवेंगे, श्री भगवत सुमरता जा ॥७॥
ख़तम कर ख़्वाहिशें अपनी, लगा मन संत वृत्ति में।
भजो नित राम के. डी. सिंह, हरीहर को तू ध्याता जा ॥८

निगाहे द्वेष मत रख तू, जगतपति की यह रचना है।
यही है ज्ञान ऋषियों का, कि यह संसार सपना है ॥१॥

न मैं हूँ और ना तू ही, फ़क़त हरि नाम सच्चा है।
जगेगा जब ही जानेगा, स्वप्न की यह अवस्था है ॥२॥
नहीं है सार दुनियाँ में, नहीं कुछ साथ जाता है।
धरा यहाँ पर तेरा क्या है? ये सब दो दिन का नाता है॥३॥
चलत नदी के पानी में, बबूला जैसे उठता है।
वह पैदा होके मिटता है, मनुज भी जी के मरता है ॥४॥
गये पीछे पता क्या है? निशां रहता नहीं बाक़ी।
ये तृष्णा फिर तुझे क्या है, क्यों मन अपना जलाता है? ॥५॥
बबूले की तरह मिट कर, चला जायेगा दुनियाँ से।
कहाँ जायेगा के. डी. सिंह, नहीं कुछ भेद मिलता है ॥६॥

ख़्वाबे गफ़लत से एक रोज़, इकदम उठा मैं।
तो पाया कि दुनियाँ के, झगड़ों पड़ा मैं ॥१॥
सुबह शाम करके गुज़ारी, उमर सब।
गृहस्थी के नातों का लट्टू, बना मैं ॥२॥

जनम भर फंसा मोह में लिपट कर ।
न यहाँ का न वहाँ का कहीं का रहा मैं ॥३॥
अहंकार ने मुझको घेरा वहुत है ।
गुलाम इनका वनकर दुखी ही वना मैं ॥४॥
मेरी बुद्धि क्या जाने क्यों खो गई है ?
इस दुनियाँ में रह कर, के हराँ हुआ मैं ॥५॥
न कर अव तो देरी ज़रा सिंह के. डी. ।
भजन कर यह सुनकर के एक दम जगा मैं ॥६॥

अगर कुछ भेद पा लेता, तो फिक्रे वस्ल कर लेता ।
चला जाता मैं रस्ते पर, उसी को मैं सुमर लेता ॥१॥
मगर मुझको न था मालूम, हुवा गुम राह दुनियाँ में ।
सरासर यह तो ग़लती थी, उसी का ध्यान धर लेता ॥२॥
मेरी बिगड़ी दशा पर अव, दया फ़िर कौन कर देवे ?
सिवा उसके नहीं मुमकिन, शरण उसके ही पड़ लेता ॥३॥

बहुत तारे हैं उसने तो, अधम बिगड़ों को दुनियाँ में ।
मैं क्यों मायूस हो जाऊँ, मेरे पापों को हर लेता ॥४॥
बनालूँ फिर मैं जीवन को, सुधारूँ अपने कर्मों को ।
यह के. डी. सिंह की आशा, भक्त बन भव से तर लेता ॥५॥

लगाले चित्त भगवत में, वही है आसरा तेरा ।
उसी का तू भरोसा कर, चरन उसके का हो चेरा ॥१॥
न कुछ परवाह दुख सुख की, यह थोड़े दिन के महमाँ हैं ।
चले जायेंगे तुझको तज, रहे इनका यूँही फेरा ॥२॥
वो दिन नज़दीक ही है अब, बिछुड़ जायेगा दुनिया से ।
सभी वस्तु को त्यागेगा, नहीं साथी कोई मेरा ॥३॥
नहीं फिर मोह वाजिब है, न कर संसार से प्रीती ।
न रिश्ता और नाता रख, तुझे इस मोह ने घेरा ॥४॥
लगाले ज्ञान में बुद्धि, विचार अब अपने जीवन को ।
यही है ज्ञान के. डी. सिंह, न हो माया का अंधेरा ॥५॥

करो नित याद भगवत की, चित्त एकाग्र हो करके।
भुलाकर आप अपने को, सभी पुन पाप धो करके ॥१॥
जलाकर ज्ञान का दीपक, उजाला करलो हृदय में।
लगालो ध्यान मालिक में, सभी रिश्तों को खोकर के ॥२॥
बहुत दिन सो लिया जग में, बिताई उम्र विषयों में।
ज़रा जागो तो तुम प्यारे, उठो तुम अब तो सो करके ॥३॥
यह के. डी. सिंह कहता है, करो विश्वास ईश्वर पर।
किया तो क्या किया विषयों में, मन अपना डुबो करके ॥४॥

करें हम याद ईश्वर की, वही संकट हटावेगा।
मुसीबत आने जाने की, वही सब की छुटावेगा ॥१॥
ये दुनियाँ बाग़ उसका है, किये पैदा हैं फल उसने।
उसी का नूर ज़ाहिर है, वही फल को चखावेगा ॥२॥
हैं मीठे खट्टे और कड़वे, इन्हीं में तीन गुण मौजूद।
पसन्द जो हमको हो जावे, वही ईश्वर दिलावेगा ॥३॥

रजोगुण है यह ना मरगूब, तमो गुण भी नहीं अच्छा ।
करें हम सत्व का पालन, वही हमको तिरावेगा ॥४॥
इसी में हम अभय होकर, करें भक्ती उस ईश्वर की ।
यह के. डी. सिंह का निश्चय, वही बन्धन कटावेगा ॥५॥

गुनाहों से अब हम बचा ही करेंगे ।
अधर्मों से हम तो डरा ही करेंगे ॥
जो कुछ पाप हमने किये हैं उमर भर ।
मिटाने की उनकी फ़िकर भी करेंगे ॥
गई सो गई ज्यो यह बिगड़ा है जीवन ।
अब हम तो फ़िकर इस रही की करेंगे ॥
भजन रात दिन नाम ईश्वर का करके ।
दशा उसके दीवानों कीसी करेंगे ॥
क्षण भर न खाली रहे के. डी. सिंह अब ॥
हरेक श्वांस में याद उसी की करेंगे ॥

दरस विन तेरे अय भगवन् !
भ्रमन दुनियाँ में करता हूँ ॥
लगाकर फाँसी गर्दन में ।
घड़ा पापों से भरता हूँ ॥१॥

नहीं सोचा न कुछ समझा ।
कि है संसार क्या वस्तु ॥
मोहित इस पर ही होकर के ।
इसी का ध्यान धरता हूँ ॥२॥

हटाकर मन को अब इनसे ।
करूँ हूँ याद मैं तेरी ॥
तू ही तो सार वस्तु है ।
तुझी को अब सुमरता हूँ ॥३॥

उजाला अब मेरे मन में ।
करादे ज्ञान का ईश्वर ॥
तेरी शक्ती से अय भगवन् !
मगन मन हो विचरता हूँ ॥४॥

यह के. डी. सिंह कहता है ।
तेरी माया तो अद्भुत है ॥
इसी माया को वस कर के ।
तेरे गुण गान करता हूं ॥५॥
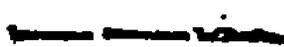
क्या सोचे है रे मूरख, यह तो रचना ईश्वर है ।
क्यों करता इससे मोह, मालिक इसका ईश्वर है ॥१॥
तरह तरह के हैं जीव, क़िस्म क़िस्म के भोजन हैं ।
विष अमृत हैं मौजूद, इनका करता ईश्वर है ॥२॥
योग वियोग हैं इसमें, जन्म मरण का है संग ।
एक का दूजा वैरी है, संहरता ईश्वर है ॥३॥
सब खेल खिलोने हैं, सारे रिश्ते नाते हैं ।
ग़ौर से इनको देखो, इनमें रमता ईश्वर है ॥४॥
नहीं लाया कुछ अपने साथ, ना ले जावेगा यहाँ से तू ।
है पाप की गठरी सर पर, भार हरता ईश्वर है ॥५॥

ज्ञान के रस्ते चलना, अज्ञान के गढ़ों ना पड़ना ।
मौत को रख कर याद, पार भव करता ईश्वर है ॥६॥
याद रखो के. डी. सिंह, निर्भय रहना दुनियाँ में ।
सत्य को धारण करलो, मङ्गलो करता ईश्वर है ॥७॥

मनुष्य देही एक ऐसी है, जिसे समझो शहर सा है ।
इसी में नौ हैं दरवाज़े, इसी में जीव रहता है ॥१॥
वह हैं दो कान और आँख, और दो छेद की है नाक ।
दो हैं मल मूत्र के रस्ते, नवाँ मुख नाम रक्खा है ॥२॥
श्वास उसका फ़सील इक है, बना है हड्डियों से वह ।
त्वचा उसकी है इक दीवार, माँस और ख़ूं से लिपता है ॥३॥
नसों से है जकड़ रक्खा, खड़ा बाहर को जंगल है ।
उसे बालों से ढक रक्खा, समय पर वह भी कटता है ॥४॥
करें है राज उस पर जो, उसी को जीव कहते हैं ।
उसी के मंत्री दो हैं, नाम मन बुद्धि उनका है ॥५॥

ये दोनों मंत्री ऐसे हैं, लड़ाई रोज़ करते हैं।
इधर राजा के दुश्मन पाँच, सरासर उन से दबता है ॥६॥
वह हैं काम क्रोध मद लोभ, मोह भी उन में शामिल है।
हँसे वह देख कर ऐसा, कि राजा नाश होता है ॥७॥
अगर राजा ढके सब दर, तो उसको है नहीं खतरा।
यह दुश्मन प्रीति फिर करते, अमन राजा तो पाता है ॥८॥
मगर दुश्मन भी ऐसे हैं, जो मौक़ा ताकते हरदम।
वह लश्कर अपना ले जाते, ज्योंही दरवज़ा खुलता है ॥९॥
वह घुसते शहर के अन्दर, मिलें मन मंत्री से तब।
उसी से मेल करते हैं, मदद उनकी वह करता है ॥१०॥
वह सारी इन्द्रियों से मिल, शहर को नाश करते हैं।
तमाशा देख कर बुद्धि, विदा मंत्रीवो होता है ॥ ११ ॥
रहा राजा अकेला फिर, अलहदा हो गये मंत्री।
यह मग़लूब हो के दुश्मन से, सब अपना राज खोता है ॥१२॥
यह पांचों चोर हैं दुश्मन, लगाते प्रीति विषयों में।
विषय ख्वाहिश करे पैदा, ख्वाहिशो में लिपटता है ॥१३ ॥

जब ख़्वाहिश पूरी नही होती, उसेफिर क्रोध होता है
क्रोधी बन होता अज्ञानी, सुमरति ज्ञान जाता है ।।१४।।
सुमरती ज्ञान जाने पर, कूच बुधि भी कर जाती ।
बिना बुद्धि केचोलाक्या, मनुज खुद आप मरता है।।१५।।
यही है ज्ञान ऋपियोंका, इसे हर दम बिचारा कर।
रहे हुशियार के, डी, सिंह, नहीं दुश्मन से डरता है।।१६।।

अँधेरा है बहुत भारी, हर एक जा ग़ार मिलते हैं।
बिना सूझे मेरे स्वामी, अनेकों कष्ट पड़ते हैं ।।१।।
जिन्हें समझा था अपना अंश, उन्हीं कें मोह के खड्डे ।
पटकते सर व सर मुझको, मेरी बुद्धि को हरते हैं ।।२।।
यह मद उर मोह है ईश्वर, मेरे मन को करे चंचल ।
ज़ख्म दिल पर मेरे करके, नमक उस पर छिड़कते हैं ।।३।।
यह काम और क्रोध हे मालिक, मुझे अति दुःख देते हैं ।
मेरे तन को बना घोड़ा, यह दोनों निस चढते हैं ।।४।।

जभी लूँ नाम तेरा मैं, मेरे चित्त को लुभाते हैं।
मेरी मन्ज़िल करी मुश्किल, यह तुमसे दूर रखते हैं।५॥
कृतारथ नाथ कर मुझको, सरल रस्ता बता दीजे।
जो होवे पार के. डी. सिंह, विनय अन्तिम यह करते हैं॥६॥

समय नेक बद मेरा देखा हुआ है।
खुदी बे खुदी को भी जाना हुआ है॥१॥
अजब खेल दुनियाँ रहा उम्र भर अब।
गदाई व शाही को परखा हुआ है॥२॥
क़नाअत न थी फिर क़नाअत हुई है।
कभी जोश दुनियाँ, वह ग़म आ हुआ है॥३॥
घुलाया कभी जिस्म को फ़िक्र ही में।
खुशी में तो मालिक भी भूला हुआ है॥४॥
मैं नादान बनकर तमाशा बना था।
अब जगदीश से मन लगाया हुआ है॥५॥

न कर सोच भाजी का तू सिंह के. डी. ।
मुझे ज्ञान भक्ति का पैदा हुआ है ॥६॥

यह दुनियाँ में क्यों शोक फैला हुआ है ।
ज़माना बुरा क्यों बताया हुआ है ॥
नहीं कुछ क़ुसूर है ज़माने का हर्गिज़ ।
कुकर्मों में दिल को लगाया हुआ है ॥
फँसे है बुरी तौर दुनियाँ के अन्दर ।
ज्यो अपना था वो भी पराया हुआ है ॥
ज़माने को बदनाम क्यों कर रहे हो ।
जो दुनियां में बोया कमाया हुआ है ॥
नहीं दोष मालिक या दुनियाँ का कुछ है ।
ये संचित करम साथ लाया हुआ है ॥
विचार अपने कर्मों को हे सिंह के. डी. ।
इन्हीं का तो फल तुमने पाया हुआ है ॥

रमापत्ति का हर दम ही ध्यान धरो तुम ।
कुशल दूसरों की मनाया करो तुम ॥
किसी को दुखी देख खुश तुम न होना ।
बुराई किसी की से मन में डरो तुम ॥
समझकर यह इक आत्मा सब के अन्दर ।
हरी को सभी में बराबर लखो तुम ॥
खुशी ना खुशी को तुम यकसाँ हीं समझो ।
भगवत लगन में मगन हो फिरो तुम ॥
खुश मोह में क्यों हुवा के. डी. सिंह ? ।
तू जगत पति चरन की शरन में पड़ो तुम ॥

अविचल भक्ति ज्ञान मोहि, दीजो कृपा निधान ।
शरण चरण में आय के, ठाड़ो यह नादान ॥ १ ॥
भक्ति शक्ति है नहीं, नहीं ज्ञान है नाथ ।
शरण पड़े के शीश पर, प्रभु धरो तुम हाथ ॥ २ ॥

दीन दयालु दया करो, पाप ताप देउ मेट।
मो सम कोइ न दीन है, यह मन तुम्हरे भेंट ॥ ३ ॥

सार नहीं है कछु यहाँ, नहीं लाभ ओह हानि।
तुम विन कौन हितू यहाँ, मेरो हे भगवान् ॥ ४ ॥

मिथ्या सब जग नात है, फीका है संसार।
घूम रहा भवसिन्धु में, पार करो करतार ॥ ५ ॥

बन कर केवट नाथ तुम, नैया मेरी खेउ।
जग बन्धन सब काटकर, अचल शान्ति मोहि देउ ॥ ६ ॥

डूब रहा भवसिन्धु में, बिना भक्ति अरुनेम।
पार लगैया हो तुम्हीं, निज दासन पर प्रेम ॥ ७ ॥

गई उमरया नींद में, कियो न कबहूँ चेत।
आशा फाँसी लग रही, कियो न तुमसे हेत ॥ ८ ॥

जग पालक जग राई प्रभु!, तुमहिं माई बाप।
जग रक्षक जगदीश हरि—जगदाधार हो आप ॥ ९ ॥

सार वस्तु संसार में है तुम्हरो ही नाम।
सत्य शांति उर में सदा, रहे तुम्हारो ठाम ॥ १० ॥

मोह गर्भ को त्याग कर, छोड़ें हम अभिमान।
काम क्रोध को भूल कर, तजें मान अपमान॥ ११॥
ईर्ष्या द्वेष मिटाय कर, जग देखें तव अंश।
सिवा नाम भगवान के, नहिं कोई और प्रशंस॥ १२॥
निकट होय भगवान के, करमन चरणन लीन।
सेवक धर्म विचार के, के. डी. सिंह बन दीन॥ १३॥

तमाशा देख रचना का, मुझे हैरानी होती है।
न कुछ तेरा न मेरा है, तो आशा किसकी होती है॥ १॥
जहाँ अमृत किया पैदा, वहाँ मौजूद विष भी है।
अकल अपनी से तुम परखो, तमन्ना जिसकी होती है॥ २॥
नहीं क्यों शान्ती होती, परेशां क्यों हुवा हूँ मैं?।
अजब ये राज़ ईश्वर है, अकल क्यों मेरी खोती है?॥ ३॥
हटे अज्ञान का परदा, खुले जब राज़ यह मुझ पर।
नहीं फिर भेद बाकी है, नज़र आगे यह ज्योती है॥ ४॥

रहे फिर शान्त के, डी. सिंह. नहीं सुख दुख की परवा है।
अचल श्रद्धा करूँ अपनी, उसी से मुक्ति होती है ॥ ५ ॥

अँधेरे में किया वासा उजाला कैसे होवेगा ? ।
नहीं श्रद्धा है मुझको कुछ, सँभाला कैसे होवेगा ? ॥१॥
लगा है चित्त दुनियाँ में, नहीं है फिक्र आगे की ।
इसी में दिल फँसा रक्खा, निकाला कैसे होवेगा ? ॥२॥
करा है ग़ौर मैंने अब, तो देखा काल आगे है ।
परेशां होके घबराया, उद्धारा कैसे होवेगा ? ॥३॥
जो देखा खोल कर आँखे, विचारा क्या किया मैंने ? ।
गुज़ारी उम्र विषयों में, सुधारा कैसे होवेगा ? ॥ ४ ॥
लगाले ध्यान के. डी. सिंह, चरण कमलों में ईश्वर के ।
भजन कर रात दिन उसके, उबारा ऐसे होवगा ॥ ५ ॥

है आशा रूपी एक सागर, मनोरथ का है जल उसमें।
तरंगें हैं तृष्णा की, उठें हैं हर समय जिसमें ॥ १ ॥
पड़ा है बीच धारा में, मगर एक राग का वहाँ पर।
शजर एक धीर्य्य का बनकर, खड़ा है बीच में जहां पर ॥ २ ॥
वितर्क और तर्क रूपों में, उडैं दो पक्षी ऊपर से।
शजर हरदम यह काटें हैं, यही दो पक्षि मिल करके ॥ ३ ॥
भँवर है मोह का एक रूप, पड़ा मझधार के अन्दर।
बहुत गहरी यह नदी है, किनारे चिन्ता के भय कर ॥ ४ ॥
उसे जो पार करता वह, शुद्ध मन का है योगीश्वर।
वही तो ब्रह्म आनँद में, विचरता हो मगन मुनिवर ॥ ५ ॥
विचारो सिंह के. डी. अब, करो तुम ज्ञान कुछ हासिल।
उल्लंघन करके सागर को, मगन हो ब्रह्म से वासिल ॥ ६ ॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो
भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥

य. अ. ४० मं. १८

हे प्रकाशवान् ! परमात्मन् ! आप हमारे सम्पूर्ण शुभ व अशुभ कर्मों को जानते हैं । कृपाकर हमको इष्ट प्राप्ति के लिये आनन्द मार्ग से चलाइये हमसे कुटिल पाप को दूर कीजिये । हम लोग आपकी बड़ी नम्रता से स्तुति करते हैं । यानी विज्ञान मय अन्तर्यामी होने से आप हमारे सब शुभ व अशुभ कर्म को जानते हैं । जब हमारा मन क्षण क्षण में आकाश पाताल की खबर लाता है कि तु आपको उलाँघ नहीं सकता, तब दूसरी इन्द्रियों का तो कहना ही क्या है ? और हम आपके हुक्म से किसी तरह बाहर नहीं जासकते, इसीलिये हमको सीधे मार्ग से चलावें जिसस आत्मिक दुःख, दुष्ट जीवों का दुःख और दैवी दुःख

न सतावें। और कुटिल भाव और पापाचरण जो इनकी जड़ है उनसे अलहदा रक्खें। इसलिये हम वार वार बड़ी विनय के साथ आपकी प्रार्थना करते हैं।

॥ नज़्म में ॥

हे रोशन ज़मीर हे परम आत्मा,
हमारा करम है बुरा या भला।
सभी से हो वाक़िफ़ हमारे पिता,
छुपा है नहीं राज़ तुम से ज़रा॥
हमें इष्ट मिलन को आनन्द दो,
कुटिल पाप हमरे करो दूर तो॥
करें हैं नम्रता से स्तुति तुम्हारी,
हमारी विपत तुम बिना किसने टारी॥
हमारा ही मन जब कि लाता खबर है,
वह हर वक़्त आकाश पाताल पर है॥

मगर लाँघ सकता नहीं आपको है,

तो फिर इन्द्रियों का तो कहना हि क्या है ॥

नहीं हम हैं बाहर हुकम आप से,

चलाओ हमें नेक ही रास्ते ॥

नहीं हो कभी दुःख आत्मिक हमें,

न हों दुष्ट जीवों से कुछ दुख हमें ॥

सतावें न हमको दैव दुःख कभी,

यही तीन दुःख हैं निवारो सही ॥

कुटिल भाव और पाप इनकी तो जड़ है,

अलग इनसे रखना तुम्हें लाज़मी है ॥

इसी के लिये हम बहुत नम्रता से,

मस्तक नवा अर्ज़ करते सदा से॥

विनती करे सिंह के. डी. यहाँ पर,

दया अपनी करना सभी जीवों पर ॥

मुझे क्या काम दुनियाँ से, मुझे भगवान् प्यारा है।
नहीं विश्राम कुछ यहाँ पे, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ १ ॥
छुटा संसार का बन्धन, करूँ भगवान् का सुमरन।
अकेला मैं फिरूँ वन वन, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ २ ॥
यह तृष्णा मेरी हट जावे, क्रोध और काम मिट जावें।
यह मेरा लोभ हट जावे, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ३ ॥
नहीं मद मोह मुझ को हो, रटूँ श्रद्धा से तुझ ही को।
न चाह हो मेज़ कुर्सी को, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ४ ॥
तजूँ मैं वस्त्र और शुत्तर, रखूँ लँगोट ही अन्दर।
भस्म संतोष हो तन पर, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ५ ॥
न बरतन हो न भांडा हो, कमन्डल से गुज़ारा हो।
फक़त गंगा किनारा हो, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ६ ॥
ज़रूरत हो न नौकर की, न हो कुछ चाह चाकर की।
करूँ सेवा जगत भर की, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ७ ॥
रहूँ नज़दीक सन्तों के, करूँ सत्संग ही उनसे।
यही है आरज़ू मन से, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ८ ॥

ज़ुबाँ पर नाम भगवत का, हरेक क्षण ध्यान भगवत का ।
यही हो लक्ष जीवन का, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ ६ ॥
मेरा जीवन हो ऐसा जब, शरन भगवत मुझे लें जब ।
मिटें सब शोक मेरे तब, मुझे भगवान् प्यारा है ॥ १० ॥
के.डी. सिंह उम्र गुजरी, ग्रहस्थ रहने में ही सगरी ।
करूँ श्रद्धा से जप हरि हरि, मुझे भगवान् प्यारा है ॥११॥

दुनियाँदारी में प्यारे धरा क्या है ?
यहाँ आकर के तुमने करा क्या है? ॥ १ ॥
तुम आये यहाँ अपना बन्धन छुड़ाने ।
या आये यहाँ अपना बन्धन बढ़ाने ।
दुनियाँ० ॥ २ ॥
नहीं याद मालिक की तुमने करी है ।
नहीं जाना दुनियाँ ये बाज़ीगरी है ।
दुनियाँ० ॥ ३ ॥

करा साथ चोरों का तुमने यहाँ पर।

बिगाड़ा है जीवन को तुमने अरे नर।

दुनियाँ० ॥ ४ ॥

सुधारो ज़रा अपने जीवन को प्यारे।

हटा कर के पापों से भजलो मुरारे।

दुनियाँ० ॥ ५ ॥

विचारो मनुष्य देह मुश्किल से पाई।

अगर तुमने इसको है वृथा गँवाई।

दुनियाँ० ॥ ६ ॥

तो फिर तुम दुखी होके पछताओगे।

कफ़े दस्त मल मल के रहजाओगे।

दुनियाँ० ॥ ७ ॥

अगर धर के धीरज विचारोगे यहाँ पर।

न तुम हो न हम हैं ये झूठी सरासर।

दुनियाँ० ॥ ८ ॥

तलब कर रहम के. डी. सिंह, भरोसा कर के कामिल तू।
उभरने में नहीं शक है, अरे संसार सागर में ॥५॥

मेरे आगे पड़ा परदा, चलूँ मैं क्या अँधेरा है ?
नहीं कुछ दीखता मुझको, देखूं मैं क्या अँधेरा है ॥१॥
कोई दुनियां में ऐसा हो, बढ़ावे मेरी श्रद्धा को।
निकल घर से चलूँ बाहर, फिरूँ मैं क्या अँधेरा है ॥२॥
अब ऐसा वक्त आ पहुँचा, हुई सब इन्द्रियां दुर्बल।
नहीं क़ाबू में तन और मन, करूँ म क्या अँधेरा है ॥३॥
लड़ाई रोज़ होती है, नहीं धीरज धराती है।
रखा कन्धे पै है जुदा, बसीहुँ क्या अँधेरा है ॥४॥
कोई योगी हो के. डी. सिंह, उजाला कर दे हिरदे में।
उठादे परदा आगे का, जगूँ मैं क्या अँधेरा है ॥५॥

कमर बाँधो चलो जल्दी, कड़ी मंजिल है आगे की।
तुम्हें आलस ने घेरा है, बड़ी मंजिल है आगे की ॥१॥
गुमाते हो समय अपना, घटाते ज़िन्दगी अपनी।
नहीं कुछ फ़िक्र की तुमने, बड़ी मुश्किल है आगे की ॥२॥
वचन ये याद कर लेना, मुसीबत में नहीं कोई।
मदद तुमको जो कर देवे, कड़ी मंजिल है आगे की ॥३॥
जिसे समझो हो तुम अपना, वही बेगाना होवेगा।
निराशी बन के भज लेना, घड़ी सुख की है आगे की ॥४॥
करम तुमने किये जो कुछ, वही साथी तुम्हारे हैं।
भली है या बुरी करनी, खड़ी मुश्किल है आगे की ॥५॥
न कर गफ़लत तू के. डी सिंह, लगादे ध्यान ईश्वर में।
नही संकट विपद रखो, जड़ी मंजिल है आगे की ॥६॥

ये दुनियां एक सागर है, चेतन जड़ उसमें बसता है।
ये काटें जीव के बन्धन, यही ईश्वर की रचना है ॥१॥

लगाते हैं सभी गोते, पड़े मझधार के अन्दर।
निकलने की नहीं शक्ति, नहीं धीरज को धरता है ॥२॥
किलोले करते पानी में, उभरते डूबते सब हैं।
नहीं नौका नज़र आती, न केवट दीख पड़ता है ॥३॥
यही हालत है जीवों की, मदद कोई नहीं देता।
भरोसा वे करें किस पर, न कोई पार करता है ॥४॥
करें गर याद ईश्वर की, भुलाकर अपने जीवन को।
दया अपनी दिखाता है, मदद कर कष्ट हरता है ॥५॥
करो तुम आसरा उसका, वही ईश्वर जगत का है।
दया भंडार वोही है, जगत का वोही भरता है ॥६॥
मुझे भी तार दे प्यारे, छुड़ाकर द्वन्द फन्दों से।
यह के. डी. सिंह दुखी होकर, तेरे चरणों में गिरता है ॥७॥

आके दुनियाँ के झगड़ों में फँसना नहीं।
उसमें रह कर मुसिवत में पड़ना नहीं ॥ १ ॥

बुरी है ये दुनियाँ बुरे इसके धन्दे ।
यहाँ फँस के आफ़त में पड़ना नहीं ॥ २ ॥
कमर बाँध कर छोड़ दो मोह मद को ।
अय ! मित्र इनकी उलफ़त में पड़ना नहीं ॥३॥
सुबह शाम सोचो किये कर्म अपने ।
झूँटी रग़बत महोब्बत में पड़ना नहीं ॥ ४ ॥
मैं कहता हूँ तुमसे, ख़बर दार रहना।
तुम इसकी कसाफ़त में पड़ना नहीं ॥ ५ ॥
बड़ा गूढ़ भेद इसमें मालिक का है।
दुखी बन के ग़ैरत में पड़ना नहीं ॥ ६ ॥
ज़रा ध्यान दिल से धरो के. डी. सिंह अब ।
कभी इसकी चाहत में पड़ना नहीं ॥ ७ ॥

ज़रा सोच लूँ कौन हूँ मैं जगत में ?
हुआ बन्ध क्यों खोजलूँ मैं जगत में ॥ १ ॥

मैं हूँ आत्मा सच्चिदानन्द घन रूप ।
बन के कर्मों का करता मिटाया स्वरूप ॥ २ ॥
फँसा इस तरह बन्ध बन्धन में आकर ।
करता कर्मों का हो खोया आपा भुला कर ॥ ३ ॥
पड़ा बे खबर बहरे आवागमन में ।
लगाता हूँ चक्कर जनम व मरन में ॥ ४ ॥
यही है गा बन्धन का कारण यहाँ पर ।
यही भार गठरी धरी है गी सिर पर ॥ ५ ॥
खुदी को मिटाकर रहूँ बे खुदी में ।
भुला कर के आपे को अपने ज़री में ॥ ६ ॥
न फिर मान अपमान मौजूद है ।
न कुछ मोह अभिमान मौजूद हैं ॥ ७ ॥
हटा दूँ तो फिर भार कर्मों का मैं ।
मगन हो के ईश्वर की भक्ती करूँ मैं ॥ ८ ॥
अरे के.डी.सिंह तू बढ़ा अपनी शक्ति ।
सुमर करके भगवत करो अपनी मुक्ति ॥ ९ ॥

दूर है और पास भी है, वह तो सुन्दर श्याम है।
योग साधन के सिवा, दीखै नहीं सुखधाम है ॥१॥

मैं नहीं और तू नहीं है, और क्या रक्खा यहाँ ?
फिर भला संसार क्या है? बस उसी का नाम है ॥२॥

ज्ञान क्या? अज्ञान क्या है?, प्रेम भक्ति कौनसी ?
न्याय क्या अन्याय क्या? रख मन में राधेश्याम है ॥३॥

तोड़ दे नाता व रिश्ता इस जगत का एक दम।
फिर तुझे क्या शोक है? बस उम्र की अब श्याम है ॥४॥

करके हिम्मत अब ज़रासी, खोलदे आँखों को तू।
चन्द रोज़ों के लिये तेरा यहाँ विश्राम है ॥५॥

देखले ईश्वर को सब, जीवों में व्यापक एकसा।
हर समय है याद उसकी, हर श्वास पै जप राम है ॥६॥

ग़ौर कर इस राज़ पर, अय सिंह के. डी. तू ज़रा!
सिर्फ भगवत के भजन के, और नहीं कछु काम है ॥७॥

नहीं है मोह दुनियाँ से, नहीं मद मुझको हे स्वामी !
नहीं कुछ काम बाक़ी है, भजूँ नित तुजको हे स्वामी ॥१॥
नहीं अब लोभ मुझको है, नहीं है क्रोध से ही काम ।
बनादे शान्त चित मेरा, अचल वृत्ती हो हे स्वामी ॥२॥
अचल मन तुझ में हो जावे, श्रद्धा मेरी तुझी में हो ।
ज़ुबाँ पर नाम तेरा हो, हृदय वासा हो हे स्वामी ॥३॥
समय मेरा तो आ पहुँचा, धरी गठरी अधर्मों की ।
करो हल्की इसे जल्दी, कृपा तेरी हो हे स्वामी ॥४॥
बहुत कुछ आसरा तेरा, हुआ है सिंह-के.डी.को ।
निरागी उसको मत करना, शरणलो सब को हे स्वामी॥५॥

तारकुल दुनियाँ होकर के, शरन में जाउं उसके मैं ।
भुलाकर राग द्वेषों-को, ध्याऊं गुन गाऊं उसके मैं ॥ १ ॥
नहीं कुछ मोह मुझको हो, न हो जीवन की परवा भी ।
करूँ पिंजरे को ख़ाली अब, छुटा पीछा जहाँ से मैं ॥ २ ॥

अगर मन्जूर मालिक हो, सफ़र यह सुःख दाई हो ।
लगा कर यकसु मन अपना, मगन हो जाऊँ उसमें मैं ॥ ३ ॥
बनै साथी मेरा विज्ञान, रहै हर दम वो मेरे साथ ।
उसी में शान्ति पाकर के, सुमर लूँ ओ३म् दिल से मैं ॥ ४ ॥
ज़रूर यक दिन तो के. डी. सिंह गुज़र होगी तेरी उस पास ।
उसी ईश्वर के चरणों में, पहूँ जाकर के मन से मैं ॥ ५ ॥
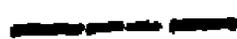
सुखी और दुखी में फ़रक़ कुछ नहीं है,
अमीरी ग़रीबी में तर्क कुछ नहीं है ।
न अच्छा बुरा है कोई इस जगत में,
सभी एक से हैं फ़रक़ कुछ नहीं है ॥१॥
सनातन से ये दोनों साथी हुये हैं,
स्वर्ग और नरक में फ़रक़ कुछ नहीं है ।
है नेकों की नेकी बदों की बदी है,
विचारों में उनके फ़रक़ कुछ नहीं है ॥२॥

जभी मिट गये द्वेष इच्छा तुम्हारे,

तो जीवन मरण में फ़रक़ कुछ नहीं है।

वैरागी को क्या देखना के. डी. सिंह,

एक ही आत्मा है फ़रक़ कुछ नहीं है ॥३॥

जिसे है ज्ञान ईश्वर का, उसे वैराग्य होता है।

दृष्टि जब होगई सूक्ष्म, तभी वो राग खोता है ॥१॥

गये फिर राग सब मन से, विरागी होगया पूरण।

हर इक छिन याद है भगवत, सभी पुन पाप धोता है॥२॥

मनुज निष्पाप फिर वो है, नहीं है भार कर्मों का।

मिली है शान्ती उस को, अभय दुनियाँ में होता है॥३॥

नहीं सुख दुःख उसे व्यापे, नहीं है द्वेष भी उस को।

इसी को मुक्ति कहते हैं, इसी में मोक्ष होता है ॥४॥

मिटा कर राग के. डी. सिंह, क़दम वैराग्य में रक्खो।

भुलाओ अपनी हसती को, यों हीं वैराग्य होता है ॥५॥

जिसका भगवान सहायक है,
भला उसको डर किस का है रे।
जिसके मन में कुछ द्वेष नहीं,
वो तो प्रेमी उसका है रे ॥ १ ॥

जब राग गया तब तृष्णा कहाँ,
बिन राग के ही वैराग्य हुआ।
फिर करम अकर्म से क्या मतलब ?
वो तो त्यागी पूरा है रे ॥ २ ॥

त्यागा दुख रूपी इस जग को,
घर जंगल एक हुवा उसको।
उसको अज्ञान न मोह रहा,
वो तो ईश्वर ज्ञाता है रे ॥ ३ ॥

है इस दुनियाँ में सार नहीं,
बन्धन का कारण है येही।
तुम सोचो के- डी. सिंह अब तो,
जग से क्यों मोह हुवा है रे ॥ ४ ॥

जिनको ज्ञान नहीं है, उनको, विज्ञान कहाँ है जी ।
जिन के मन शुद्ध नहीं हैं. उनको भाव कहाँ है जी ॥१॥

जब प्रेम नहीं तब शान्ति कहाँ, इस मन के मन्दिर में ।
जब चित्त को शान्ति नहीं, आनन्द निधान कहाँ है जी॥२॥

चैन बिना मन यकसूं नहीं है, भक्ति बने क्यों कर ।
मन जब काबू में नहीं है, फिर तो ध्यान कहाँ है जी ॥३॥

पल पल करके आयु बिता दी, दुनियाँ सागर में ।
जब विषयों का संग रहा, कहो तब ज्ञान कहाँ है जी ॥४॥

परम शान्ति गर चाहते हो, वैराग्य करो हासिल ।
उसके बिन के.डी.सिंह, भला शुभस्थान कहाँ है जी ॥५॥

मत सोच करो दुनियां का,
यह दुनियां ख्याल तमाशा है ।

सम्भल के चलना इस में तुम,
जाँच यहाँ रत्ती माशा है ॥ १ ॥

चार दिवस के कारण,
आया तू इस जग में ।
क़र्ज़ चुकाया जब सब का,
फिर मरघट बासा है ॥ २ ॥

झोली खाली कर कर्मों की,
आवागमन का फन्द हटा ।
राम रमापति भजले,
वो ही तेरा दाता है ॥ ३ ॥

महर बिना उस के तुम,
सिंह के. डी. ग़ौर करो ।
उस बिन कौन सहायक ?
वो जग की आशा है ॥ ४ ॥

मेरा मोह मद मुझ से जाता रहा है।

जुबाँ को श्रीराम भाता रहा है॥

यह मन अब नहीं काम का है किसी का।

श्रीराम से सिर्फ़ नाता रहा है॥

जिधर देखता है जिधर ढूँढता है।

वहीं राम ही राम पाता रहा है॥

नहीं मित्र शत्रु कोई भी रहा है।

सभी में श्रीराम बसता रहा है॥

न ग़फ़लत हो इस में ज़रा सिंह के. डी.।

नज़र आगे फिर राम मिलता रहा है॥

बतलादे प्यारे जग में, तेरा क्या रक्खा है?

तन धन कुछ नहीं तेरा, मन को फिर क्या रुक्का है॥

भूल भुलइयों में पड़ कर, अपना नाश कराता है।
होश में आओ भाई, घोर नर्क का धक्का है॥
भवसिन्धु बहुत बड़ा है, पार उतरना मुश्किल है।
भगवत भजन ही ऐसा, जिस का आशा पक्का है॥
निश्चय यह सिंह के. डी., नहीं रुकावट है।
जब तन वासा उस का, अपना फिर क्या रक्खा है॥

छिन २ याद हो तेरी, नाम निरञ्जन लब पर हो।
श्वास २ सोऽहम् जपना, बाहिर भीतर हो॥
खाते, पीते, जगते, सोते, ध्यान तेरे में हो।
रात दिवस सुमिरन तेरे, वास तेरा मन मन्दिर हो॥
चलते, फिरते, बैठते उठते, दरशन तेरे हों।
अन्धकार सब मिट जावें, ज्ञान उजाला हम पर हो॥
सिंह के.डी.संसार की ममता, मन से दूर करो।
फन्द छुटाओ दुनियाँ से, भूले यहाँ किस पर हो॥

मनवा तू तो भजले राम का नाम ।

छोड़ो धन्धे इस दुनिया के ।
भूत, भविष्यत् भूलो मन से ॥
हाल को देखो क्या करते ?
कर्मों को पहिचानो मन से ॥ मनवा० ॥

कर्माऽकर्म से मतलब क्या है ?
यह विषयों के साथी है ॥
त्यागो तुम फल इन का अब ।
कहना यह मानो मन से ॥ मनवा० ॥

भूल भुलइयां यह संसारी ।
फन्दा डाला गरदन में ॥
मोहित हम को यह करते हैं ।
इन का सङ्ग छुड़ाओ मन से ॥ मनवा० ॥

राम का बन्दा के० डी० सिंह ।
सोचो सार नहीं दुनियाँ में ।

राम नाम ही साथी होगा ।
झूँटे फन्द हटाओ मन से ॥ मनवा० ॥

तेरा ही नाम जप कर के, भगत जन रोज़ तरते हैं ।
भुलाते नाम तेरा जो, वो नित दोज़ख में पड़ते हैं ॥
यह तो मालूम सब को है, मगर परवा नहीं करते ।
विचारें गर ज़रा इस को, तो बेड़ा पार करते हैं ॥
करें क़ाबू अगर मन को, धरें फिर ध्यान मालिक का ।
दरश उस का वो पाते हैं, सुफल जीवन को करते हैं ॥
हुए मतवाले के. डी. सिंह, इसी दुनियाँ के फन्दों में ।
छुड़ालें इस से पीछा हम, तमन्ना दिल से करते हैं ॥

लक्ष्मी पती के ध्यान में, मन जिसका चलगया ।
उसको न मोह मद है, लालच निकल गया ॥

ग़ुस्से से काम क्या है, अहङ्कार गुम गया ।
बन्धन से वो परे है, ईश्वर में मिल गया ॥
लागू नहीं है कुछ भी, उसको ज़रा करम ।
दुःखों का साथ जो था, अग्नि में जल गया ॥
ऋषियों में उसकी गिनती, होगी यहाँ वहाँ ।
सुख का नमूना बन कर, साँचे में ढल गया ॥
दर्शन से उसके हमको, बेताबी चल बसी ।
आखिर को सिंह के. डी., तू भी सम्भलगया ॥